


प्रेमोपहार

संगीत प्रेमियोंके लिये अपूर्व उपहार ।



स्थानीय " बजरंग परीषद " द्वारा अभिनीत निम्न लिखित नाटकोंके सक्षिप्त विवरण तथा गायनकी पुस्तकोंको कुछ कापियां शेष बच गई हैं। जो सज्जन मंगाना चाहें वे नीचे लिखे पतेसे मंगालें।

वीर प्रतिज्ञा	।)	पृथ्वीराज	।)
सिंहल विजय	।)	श्रवण कुमार	।)
द्रौपदी स्वयंम्बर	।)	स्वामि-भक्ति	।)
भक्त मान्धाता	।)	देश दशा	।)
भारत वर्ष	।)	भीष्म प्रतिज्ञा	।)
लक्ष्मी विजय	।)	धर्माधर्म युद्ध	।)

भयङ्कर भूत (एक सचित्र, सामयिक तथा शिक्षाप्रद नाटक) १।)

परिषद द्वारा अभिनीत
सर्व पुस्तकोंके मिलनेका पता—
मन्त्री—**बजरंग परिषद,**
नं० २०१, हरीसन रोड, (चौतल्ला)
कलकत्ता।

दो शब्द ।



प्रिय पाठक !

यह नाटक "महाराष्ट्र वीर" नामक ऐतिहासिक पुस्तकके आधारपर लिखा गया है। वर्तमान समयमें ऐसे नाटकोंकी हिन्दी-सन्सारमें अधिक आवश्यकता है। अस्तु आशा है कि इस नाटकके द्वारा मेरा यदि सम्पूर्ण नहीं तो थोड़ा बहुत परिश्रम अवश्य सफल होगा।

२१—●—२५
"बजरङ्ग परिषद"
२०१, हरीसन रोड, कलकत्ता।

विनीत—
सरयूप्रसाद "विन्दु"



पुरूष पात्र ।

आचार्य चन्द्रशेखर	... महाराष्ट्र-वंशके श्रद्धेय महात्मा ।
छत्रपति शिवाजी	... महाराष्ट्र देशके प्रसिद्ध वीर ।
जनकराव	... एक साधारण राज्याधिपति ।
जगदीशकुमारसिंह	... एक सच्चा वीर, देशभक्त हिन्दु-धर्मानुरागी नवयुवक ।
प्रतापराव	... शिवाजीके सेनापति ।
गोविन्दराव	... एक सीधेसादे ज्योतिषी ।
औरङ्गजेब	... मुगल सम्राट ।
शाइस्ता खां	... औरङ्गजेबका सेनापति ।
शमशीर खां	... औरङ्गजेबका दूसरा सेनापति ।

सिपाही, सर्दार, गुप्तचर, जासूस, नागरिक, वज़ीर,
मौलाना, सभासद इत्यादि ।

पात्री ।

प्रभातसुन्दरी	... जनकरावकी कन्या तथा जगदीश-कुमारकी अनुरागिणी ।
पद्मावती	... प्रभातकी मुख्य सहेली ।
मोहिनी, केतकी, ललिता	... प्रभातकी सहेलियां ।

दासी इत्यादि ।



सज्जनों !

परम सौभाग्यका समय है कि, आज हम हिन्दी संसारके सन्मुख उपस्थित हो रहे हैं। मातृ-भाषाके चरणोंमें हमारे द्वारा यह प्रथम श्रद्धाञ्जलि है। हम कोई प्रकाशक नहीं और न प्रकाशन ही हमारा व्यवसाय है। यद्यपि इस विषयमें हमारी कुछ लिखनेकी इच्छा न थी, किन्तु हृदयमें उमंगकी तरङ्ग और लालसाकी उत्तेजनाने ऐसी धृष्टता करनेको वाध्य किया, परन्तु फिर भी हम इसके लिये पश्चाताप नहीं करते। कारण यह हमारा प्रथम प्रयास है। अस्तु पाठक हमें क्षमा करेंगे, ऐसी आशा है।

यह पुस्तक उस समयसे सम्बन्ध रखती है, जिस समय भारतके भाग्याकाशमें मुगलोंका अशान्ति मय झंडा प्रबल वेगके साथ अग्रसर हो रहा था। चारों ओर मुगल-शासन जेठकी दोपहरकी भांति निर्बल, असहाय प्राणियोंको त्रास दे रहा था।

ऐसे भयंकर समयमें महाराष्ट्र प्रान्तमें छत्रपति शिवाजीने जन्म लेकर आर्य जातिके अस्तित्वकी रक्षाकी थी। हम यह गर्वके साथ जोर देकर कहते हैं,कि फ्रान्समें नैपोलियनको,इङ्गलेंडमें कामवेल को, अमेरिकामें जार्ज वासिंगटन और इटलीमें जो गौरव गेरी-वालडीको प्राप्त है, वही सम्मान भारतवर्षमें छत्रपति महाराज शिवाजीको प्राप्त है। शिवाजीका जन्म उस समय हुआ था, जिस समय इस देशके राजा,महाराजा,सेठ साहूकार सभी उदर पालनार्थ अपनी वासनाओंकी तृप्तिके लिये उनके द्वारमें टुकड़े पाते थे, और उनके हुक्म करते ही अपने देश-वासियों पर कुत्तोंकी तरह टूट पड़ते थे। वे धर्म और कर्तव्यसे पतित हो गये थे। और भूल गये थे, अपने पूर्व पुरुषोंके इस उच्च आदर्श-को जिसमें एक विदेशीकी गुलामीको देशद्रोह सावित किया गया है। शिवाजीने देशकी इस हृदय विदारक दमनीय दशा-को आंख खोलकर देखा, और देखा उन विधर्मी हिन्दुओंके कमजोर हृदयोंको जिन्होंने अपनी प्यारी कन्याको मुगलोंकी अङ्क-शायिनी वनानेमें कुछ भी संकोच नहीं किया था। शिवा-जीने एकवार पुनः दृष्टि दौड़ाकर देखा तो उन्हें हिन्दुओंमें संग-ठनका अभाव, एकता और वलका ह्रास, भाई-भाईमें फूटका वीज, घर घर कलहाग्नि और स्वार्थके आगे धर्म, कर्म, एवं सि-द्धान्तोंकी वलि ही पाया। हिन्दुओंका ऐसा भीषण पतन देख

कर शिवाजीकी आंखें खुल गईं। उनके हृदयमें आर्य्यजातिके पुनरोद्धारका भाव जागृत हुआ। वे मातृ-सेवा जैसे महान अनुष्ठानके लिये कटिबद्ध हुए।

इस नाटकमें उन्हीं वीर शिवाजीके उच्च विचारों एवं कुछ महान कृत्योंका संक्षेपमें दिग्दर्शन मात्र कराया गया है।

यद्यपि इस नाटकमें कुशल नाट्यकारने जगदीशकुमारकोही नाटकका नायक बनाया है, जिसे महाराष्ट्र शिवाजीका दाहिना हाथ कहते हैं। फिर भी इस नाटकमें शिवाजीका ही 'सिंहनाद' है।

इस नाटकके लेखक कुशल नाट्यकार श्रीयुक्त पं० सरयू-प्रसादजी 'विन्दु' हैं। 'विन्दु' जीकी लेखनी उनके उच्च भाव, उनकी संगीत निपुणता एवं प्रशंसनीय नाट्यशैलीसे हिन्दी संसार भली भांति परिचित हैं। आपके कई नाटक थियेट्रिकल कम्पनियोंमें खेले जाते और कई प्रकाशित हो पाठकोंका हृदय रञ्जन कर रहे हैं। हम आशा करते हैं कि आप भविष्य में भी इसी प्रकार परिषदपर दया-भाव रक्खेंगे। परिषद्ने इस नाटकको 'विन्दु' जीसे अपने लिये लिखवाया और स्वयं अभिनीत करनेके साथ ही साथ प्रकाशित भी कर रही है। यदि पाठकोंने इस नाटकको अपनाया तो परिषद शीघ्र ही कोई दूसरा नवीन नाटक लेकर आप सज्जनोंके सम्मुख उपस्थित करेगी।

इस नाटकमें परिषद्के सुयोग्य सभापति बाबू शिवकृष्णजी भट्टड़की भी सहायता अत्यन्त प्रशंसनीय है। जिसके लिये परिषद् चिरकालतक उनकी कृतज्ञ रहेगी। साथ ही साथ इस अभिनयको शीघ्र अभिनीत करनेमें परिषद्के पात्र-मंत्री बाबू दीपनारायणसिंह तथा समस्त पात्रोंने अपना अपूर्व उत्साह दिखलाया है। अस्तु परिषद्की ओरसे उन्हें हार्दिक धन्य-वाद है।

नम्र विनयी—

सतनाम सिंह

अवैतनिक मन्त्री

कलकत्ता।
१७—७—२५

बजरङ्गपरिषद्।
२०१, हरिसन रोड, कलकत्ता।



सिंहनाद

नाटक

विशेष दृश्य

बन्दना

जय प्रथम शक्ति भगवति महामाया।
करिये कृपा असुर महिष मद हारिणी ॥ जय०॥
दारुण विलाप सन्ताप पातक निधनि।
अद्भुत प्रबल धर्म ज्योति सञ्चारिणी ॥ जय०॥
रक्षक अमरयूथ, भक्षक खल वरूथ।
वज्रवत दानवदल हृदय विदारिणी ॥
हे जननि! पाहि तव चरण प्रणमत "विन्दु"।
सिंहनादेश्वरी! जय जनोद्धारिणी ॥ जय० ॥

(सब पात्रोंका गाते गाते प्रस्थान)

प्रथम अङ्क

प्रथम दृश्य

स्थान—जंगली पहाड़ी।

(आचार्य्य और जगदीशकुमारका प्रवेश)

आचार्य्य—कुमार ! जिस तरह हिन्दू-जाति परमात्माकी सृष्टिसे अलग नहीं है उसी तरह यवन-जाति भी ईश्वरकी कारीगरीसे पृथक नहीं है। इसलिये क्रोधमें आकर किसी निरपराध जातिको समूल नष्ट कर देना अन्याय है।

कुमार—तो क्या हमारे धर्मपर आक्रमण करनेवाले म्लेच्छोंका संहार करना धर्मके प्रतिकूल है ?

आचार्य्य—है और अवश्य है, जिस तरह हिन्दू धर्मके अनुसार तुमलोग मुसलमानोंको घृणाकी दृष्टिसे देखते हो, उसी तरह यवन-जाति भी हिन्दुओंको विधर्मी समझती है। अस्तु केवल धर्मका ही झगड़ा लेकर किसी भी मनुष्य जातिको नष्ट करना अधर्म है।



कुमार—तो क्या हम अपना देश जिसे आजतक किसी गैर मुल्कके बादशाहने आंख उठाकर भी नहीं देखा, विना रोक टोक उसी देशको औरङ्गजेबके हवाले करदें ?

आचार्य्य—मैं यह नहीं कहता कि तुम अपनी स्वतंत्रताको छोड़ कर औरङ्गजेबके आधीन हो जाओ, मगर फिर भी धर्मोन्मत्त होकर किसी भी जातिके निरपराध जीवका खून न वहाओ।

कुमार—अच्छा तो आप ही कहिये, कि हमारा कर्त्तव्य क्या है ?

आचार्य्य—जगदीशकुमार ! तुम वीर हो, और वीरोंका धर्म है, कि अकारण किसीपर शस्त्र प्रहार न करे। हां, मगर सामने शत्रु आजाये तो उसके साथ पूरी युद्ध कौशलता दिखाकर उसका संहार करे।

कुमार—अच्छा तो कहिये, कि मैं क्या करूं ?

आचार्य्य—तुम अपनी सेनाको अच्छी तरह तय्यार करो, कर्तव्य-मार्गपर वलिदान होनेका विचार करो।

कुमार—मैं सहर्ष तय्यार हूं।

आचार्य्य—मगर इतना याद रक्खो कि जवतक औरङ्गजेब तुम्हारी सीमाके भीतर न आये, तवतक तुम अपनी तलवार न उठाओ।

कुमार—वहुत खूब।

आचार्य्य—लेकिन जव शत्रुओंको सेना तुम्हारे देशमें आ जाय तो उससे घोर संग्राम मचाकर या तो उसका विनाश



करो, या स्वयं समरभूमिमें अपने प्राण देकर स्वर्गमें अपना दूना विकाश करो।

कुमार—मैं ऐसा ही करूंगा, परन्तु जबतक यवनोंका आक्रमण नहीं होता, तबतकके लिये इस सेनाका क्या प्रबन्ध किया जाय?

आचार्य्य—घबड़ाओ नहीं, मुझे गुप्तचरोंसे मालूम हुआ है कि यवनसेना बहुत शीघ्र दक्षिण प्रान्तपर धावा मारने वाली है और उसे विनाश करनेका उपाय वीर शिवाजी बहुत शीघ्रतासे कर रहे हैं।

कुमार—क्या क्षत्रपति शिवाजी!

आचार्य्य—हां वही महाराष्ट्र वीर छत्रपति शिवाजी! अस्तु अच्छा होता कि तुम भी उन्हें सहायता देते।

कुमार—मैं दूंगा और पूर्ण शक्तिसे सहायता दूंगा।

उन्हींके लिये शत्रुओंसे लड़ूंगा।
महायुद्धमें शीश भी दे पड़ूंगा॥
न होगी कभी हीन वीरत्व बाजी।
करेंगे विजय छत्रधारी शिवाजी॥

आचार्य्य—धन्य है, मुझे भी तुमसे ऐसी ही आशा है।

कुमार—किन्तु आचार्य्य! इस कार्यमें देरी करना वृथा है।

आचार्य्य—मेरी रायसे आज ही प्रस्थान करो तो अच्छा है।

कुमार—बहुत ठीक, आप बैठें मैं अपने सरदारोंको बुलाता हूं।

आचार्य्य—शीघ्रता करो।



कुमार—अभी लीजिये ।

(कुमारका सीटी बजाना और पांच सर्दारोंका प्रवेश)

सब०—कुमारकी जय हो ।

कुमार—मेरे वीर सर्दारो ! हमलोगोंने मुसलमानोंको हरानेकी जो तर्कीब सोची थी उसे आज बदल दिया ।

१ सर०—क्यों कुमार ! ऐसा क्यों किया ?

कुमार—इसका कारण यह है कि हमारे पास सेना बहुत कम है और ऐसा समझकर भी उनलोगोंसे छेड़कर युद्ध करना बुद्धिमानी नहीं ।

२ सर०—महाराज ! यह माना कि हमारे पास सेना कम है, परन्तु साहस अधिक है, फिर युद्ध करनेमें क्या आपत्ति है ?

कुमार—भोले सर्दारो ! तुमलोगोंमें साहस है,वीरता है,बहादुरी है, परन्तु यवनोंमें, कायरता, कुटिलता और कृपणता भरी है, अतएव दग़ाबाजोंसे धर्म-युद्ध करना व्यर्थ है ।

३ सर०—कुछ भी हो मगर धर्मके सामने कुटिलता और दग़ाबाजी असमर्थ है ।

कुमार—मगर आज उस धर्मका समय नहीं रहा ।

४ सर०—धर्मका समय हमेशा रहा है और रहेगा ।

१ सर०—मुझे शोक है कि आपका हृदय यवनोंसे मुकाबिला करनेमें भय खाता है ।

कुमार—कभी नहीं, हर्गिज़ नहीं, यवन तो क्या यदि एक बार



रावणका भी अवतार हो जाता तो यह वीर जगदीश-कुमार उसे अवश्य मार गिराता, लेकिन मेरा दिमाग़ मुझे होशियारीसे काम करनेके लिये समझाता है।

१ सर०—यह किस तरह।

आचार्य्या—यह इस तरह कि तुमलोग थोड़ी सेनाको लेकर औरङ्गजेबपर विजय पाना चाहते हो परन्तु क्या ही अच्छा हो कि अपनी सारी सेनाको लेकर तुमलोग वीर शिवाजीके साथ मिल जाओ। तो मैं दृढ़ रूपसे कहता हूं कि वहुत शीघ्र देशको स्वतंत्र बनाहोगे।

सब०—क्या शिवाजी महाराज?

आचार्य्या—हां हाँ शिवाजी महाराज!

सब०—धन्य हो, आचार्य्या धन्य हो।

कुमार०—वीरों! क्या अब भी तुम्हें इन्कार है?

सब०—इन्कार नहीं स्वीकार है।

कुमार—शाबाश बहादुरों! शाबाश!! तुमलोग निश्चय अपने देशको स्वतंत्र करोगे।

तुम्हारे शस्त्र दुश्मनके हृदयको चीर डालेंगे।
करोड़ों हिन्दुओंके रक्तका वदला निकालेंगे॥
महा मोहान्ध वैरी वंश अपना सर झुका लेंगे।
वहादुर वीर हिन्दू हिन्दका झंडा उठा लेंगे॥
दुखी दीनोंकी दीवारोंको तुम फौलाद कर दोगे।
इसी भारतके हर एक घरको तुम आज़ाद कर दोगे॥



१ सर०—कुमार! यदि आपकी सहायता हुई और आचार्य्यको कृपा हुई तो हम ऐसा ही करेंगे।

दिखा देंगे सभी देशोंको हम कैसे दिलावर हैं।
हमारी जातिके हर एक बालक शेर नाहर हैं॥
क्षमाके रूप हैं हम, किन्तु, रणमें क्रोध-सागर हैं।
सदा आज़ाद हैं, स्वाधीन हैं, हम शूरमा नर हैं॥
नहीं वाचाल हैं हम, कार्य्यको करके दिखा देंगे।
हमारे साथ ईश्वर है तो दुश्मनको हरा देंगे॥

कुमार—अच्छा, अब जल्दी चलनेका सामान करो। मैं बहुत जल्द शिवाजीके पास प्रस्थान करना चाहता हूं।

सब—जो आज्ञा।

कुमार—ओ कुल कलङ्क औरङ्गजेब! होशियार हो; खबरदार हो, सम्हल, कहीं युद्धमें ऐसा न हो कि तूही मेरे हाथोंका शिकार हो। तेरी बादशाही समाप्त हो चुकी, तेरी होशियारी खाक हो चुकी, अब मैं तुझे अपनी तलवारका मज़ा चखाऊंगा मैं ही तेरे अत्याचारोंसे स्वदेशको स्वतंत्र बनाऊंगा।

निकलकर म्यानसे तलवार प्यारी।
बनेगी शत्रुओंकी प्राण हारी॥
समरकी है यही प्रलयाग्नि कारी।
मिटा देगी ये दुश्मनकी खुमारी॥

कमर कसलो बहादुर शस्त्रधारी।
विजय इस युद्धमें होगी हमारी॥
(सबका तलवारें निकालकर, कुमारकी जय-जय बोलना)
टेबुला पर्दा गिरता है।

द्वितीय दृश्य।

स्थान—मार्ग

(तीन यवन गुप्तचरोंका संन्यासी रूपमें प्रवेश)

१ ला०—क्यों भाई अब्दुल क़रीम !

२ रा०—हां यार मुहम्मद !

१ ला०—भाई इस मुज़फ्फर हुसेनने तो अच्छा रूप बनाया !

२ रा०—हां यार हमलोगोंने तो लाख कोशिश की, मगर ऐसा रूप न भर सके।

३ रा०—अरे बेटा ! हम तीन सालतक हिन्दुओंकी इबादतगाह काशीजीमें रहकर सब सीख आये हैं।

१ ला०—तभी तो इतना होशियार हो गया।

२ रा०—अरे यार मुहम्मद ! रूप तो हमलोगोंने बना लिया मगर बोली कैसी बोलें।

३ रा०—अरे बोली क्या बोलना है। 'सीताराम, राधेश्याम' बोलते जाओ, इसीमें सारा काम बन जायगा।

१ ला०—क्या कहा, क्या कहा ? 'टीकाराम राघोनाम' 'टीकाराम राघोराम'

३ रा० अबे ! तुझे तो कहना ही नहीं आता, 'सीताराम राधेश्याम' बोल न।

१ ला०—भाई ! मेरी ज़ुबानपर तो यह लफ्ज़ नहीं चढ़ता है।

२ रा०—अरे सीधा साधा नाम है, ज़रा याद करनेका काम है।

१ ला०—तूही जरा याद करके बोल।

२ रा०—अभी बोलता हूं, हां भाई ! क्या नाम बताया ?

३ रा०—'सीताराम राधेश्याम'।

२ रा०—वाह इसमें क्या मुश्किल है। इसे तो जै मर्तबा कहो तै मर्तबा बोल दूं।

३ रा०—अच्छा बोल न।

२ रा०—'सैंठाराम राघोराम' सैंठाराम राघोराम,

३ रा०—चुप वे नमकहराम। बोली किसी मुल्ककी न सीखी और करने लगा जासूसीका काम।

२ रा०—क्या ठीक नहीं हुआ ?

३ रा०—अबे ! ठीक क्या वह तो और भी खराब हो गया।

२ रा०—अच्छा यार ! कोई दूसरा नाम बताओ।

३ रा०—अच्छा बोल ! 'नारायण नारायण'।

पहला दूसरा—वाह वाह ! यह नाम तो बहुत सीधा है।



३ रा०—सीधा है तो बोल।

दोनों—अरे इसमें बोलना क्या है? 'नहायन नहायन नहायन'।

३ रा०—अबे रहने दे, रहने दे।

दोनों०—क्या गलती हुई?

३ रा०—अरे गलती क्या? तुमलोगोंसे निकलता ही नहीं।

१ ला०—अच्छा तो अब क्या करें?

३ रा०—देखो तुमलोग एक काम करो।

दोनों—बोलो।

३ रा०—तुम दोनों बन जाओ मौनी बाबा और मैं बन जाता हूं चेला।

१ ला०—अबे! मौनी बाबा किसे कहते हैं?

३ रा०—मौनी बाबा उन्हें कहते हैं जो हमेशा खामोश रहते हैं।

दोनों—बस यार यह तरक़ीब बहुत अच्छी है।

३ रा०—कहो कैसी बात बताई?

दोनों०—(चुप रहते हैं।)

३ रा०—अरे शाबाशी तो दो।

दोनों०—(चुप रहते हैं)

३ रा०—अबे तुमलोग तो बड़े बेहूदे हो।

दोनों—(चुप रहते हैं)

३ रा०—बेटा! ऐसे नहीं बोलोगे। (जूतेसे मारना)

दोनों—अरे! अरे!! ठहर यार, वह क्या करता है?

३ रा०—उल्लू कहींके अभीतक मुंह सिला हुआ था?



२ रा०—अरे यार! तूहीने तो मौनी बाबा बननेको कहा था।

३ रा०—कहा था तो शहरके लिये कि यहाँके लिये।

२ रा०—तौबा, तौबा, अब समझमें आया।

१ ला०—अबे हट! हमने तो जूता खाया और तेरी समझमें आया। क्यों बे मुजफ्फर! क्या शहरवाले भी मौनी बाबाको इसी तरह बुलाते हैं जैसे तूने बुलाया है?

३ रा०—अरे नहीं यार! मैंने तो तुझे सिर्फ होशियारीका सबक पढ़ाया है।

दोनों—खैर तब तो ठीक है।

२ रा०—अच्छा मुजफ्फर! इस मुल्कमें तो चारों तरफ पहाड़ ही पहाड़ हैं, भला यहाँकी बादशाहत किस काम की।

३ रा०—अबे बादशाहत कामकी न होती तो हमलोग खबर लेनेके लिये क्यों भेजे जाते?

१ ला०—अच्छा यह तो बतलाओ कि लड़ाईमें हमलोग जीत सकते हैं?

३ रा०—जीत तो सकते थे मगर वह मर्दूद शिवाजी टिकी नहीं जमने देता।

२ रा०—अमाँ! यह शिवाजी कौन है?

३ रा०—अरे देखो, देखो, एक आदमी आ रहा है।

१ ला०—क्या सच?

३ रा०—अरे हां हां।

१ ला०—अच्छा यार सरहल जाओ! या करीम या रहीम।



३ रा०—अबे चुप, चुप, यह क्या करता है ?

१ ला०—क्यों क्यों क्या हुआ ?

३ रा०—अबे उल्लू के पट्ठे! बना है संन्यासी और रहीम क़रीम चिल्लाता है। कोई सुन लेगा तो जानकी खैरियत नहीं।

२ रा०—अरे यार! भूल हो गई।

३ रा०—अबे मौनी बन जाओ, जल्दी मौनी।

दोनों०—हां, हां, यह लो मौनी बाबा बन गये।

(एक नागरिक हिन्दूका प्रवेश)

नाग०—स्वामीजी! 'नमो नारायण'

३ रा०—'नमो नारायण' भाई।

नाग०—कहिये आपलोग कहांसे आ रहे हैं ?

३ रा०—भाई हम तो काशीजीसे आते हैं।

नाग०—और ये दोनों महात्मा भी आपके साथ हैं ?

३ रा०—हां भाई।

नाग०—किन्तु यह बोलते नहीं।

२ रा०—ये दोनों मौनी बाबा हैं।

नाग०—अच्छा तो आपने आसन कहां किया है ?

३ रा०—अभी तो चले ही आ रहे हैं, अब कहीं नगरमें जाकर आसन जमायेंगे।

नाग०—अगर ऐसा है तो मेरा ही घर कृतार्थ कीजिये।



३ रा०—जैसी तुम्हारी इच्छा।

नाग०—तो फिर चलिये (नागरिकका आगे आगे प्रस्थान)

३ रा०—चलो भाई।

२ रा०—अबे मुजफ्फर!

३ रा०—अबे चुप बे।

२ रा०—अबे सुन तो।

३ रा०—अबे सुन लेगा तो जान चली जायेगी। 'नारायण नारायण'।

(प्रस्थान)



तृतीय दृश्य

स्थान—पुष्पवाटिका

(सखियोंके साथ प्रभातसुन्दरीका प्रवेश)

गायन

सहे०—कैसी कैसी है बाग़की बहार।
कोयलकी पुकारसे उठै उमंग, हृदयमें अपार॥
प्यारी प्रभात! कोमल गात, आवो करैं विहार।
प्रभात—जाओ जाओ अलबेली सहेली,
छेड़ो न बार बार॥ स० कोयल०॥
१ ली स०—काहे काहे करती हो गुमान।
२ री स०—रूठा रूठी छोड़ो करो न मान॥
४ थी स०—अहा! बनी कैसी नन्हीं नादान।
सब—प्यारी करेंगी हम तुम्हारा, फूलोंसे शृंगार॥
प्रभा०—देखो देखो कहीं टूट न जाय मेरे
गलेका हार॥ स० कोयल०॥

पद्मा०—कैसी प्यारी पुष्पलताएं वृक्षोंपर लहराती हैं।
भवरोंकी सङ्गीत टोलियां मंजुल गीत सुनाती हैं॥

ललिता—चारों ओर शोर करते हैं मोर महान उमंगोंमें।
डूवा है कोकिला कण्ठ भी पञ्चम राग तरङ्गोंमें॥

केतकी—है तो संध्या समय किन्तु सौन्दर्य्य हृदयको ठगता है।
होनेको है चन्द्रोदय पर अरुणोदयसा लगता है॥

मोहनी—आई है सुप्रभात सुन्दरी क्यों न प्रभात समय होगा।
प्यारीका पूरण विकाशमय रवि-मुख शीघ्र उदय होगा॥

सव०—होगा और अवश्य होगा।

प्रभात—अरी रहने भी दो। तुम सव तो मुझे हमेशा इसी तरह छेड़ा करती हो, एक पल भी चैन नहीं लेने देती।

पद्मा०—प्यारी! इसमें छेड़नेकी क्या वात है। अभी तो प्रीतमकी सिर्फ कानोंसे मुलाकात है।

केतकी—और क्या जव साक्षात दर्शन होगा तो सम्पूर्ण मिलन होगा।

प्रभात—अरी वाह! तुझे शर्म नहीं आती?

केतकी—प्यारी! आज कलके समयमें जव वड़े-वड़े राजपूत यवनोंको अपनी कन्या देते नहीं शर्माते तो फिर मुझे तुम्हारे साथ एक वीर साहसी पुरुष राजकुमारका सम्वन्ध मिलानेमें क्यों शर्म आये।



मोहनी—केतकी ! तू कहती तो सच है,परन्तु वे राजपूत विचारे क्या करें अन्यायसे लाचार हैं।

ललिता—अरे लाचार क्या यों कहो न कायर हैं, आलसी हैं, सुकुमार हैं।

पद्मा०—अरी नहीं री नहीं, राजपूत भी कहीं कायर होते हैं।

ललिता—होते नहीं तो फिर अनाथोंकी तरह क्यों औरङ्गजेवके दरवाजेपर टुकड़ोंकी लालचसे पड़े रहते हैं ?

मोहनी—यह भी एक समय है।

ललिता—समय नहीं, अपने वलपर विस्मय है, अपने प्राण विसर्जनका भय है।

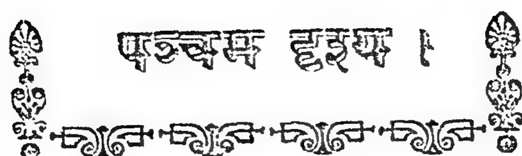
केतकी—और क्या ? यदि ऐसा नहीं है, तो क्या राणा प्रताप क्षत्री नहीं थे। फिर उन्होंने क्यों नहीं अपना धर्म छोड़ा था ? क्या अकवरका आधा राज्य उनके लिये थोड़ा था ?

पद्मा०—थोड़ा तो नहीं था ; परन्तु संसारमें सभी प्रताप सरीखे नहीं होते।

ललिता—होते क्यों नहीं, आज कल तो वह जमाना है, कि पांच-पांच वर्षके वालक भी प्रताप और पृथ्वीराजका अनुकरण करते हैं।

मोहनी—लेकिन।

केतकी—लेकिन उन्हे कोई अच्छा उपदेशक नहीं मिलता, जिसके द्वारा वह स्वदेश ज्ञान प्राप्त कर सकें।



स्थान—पहाड़ी गुफा।

"शिवाजीका दर्बार"

शिवाजी—वीर सरदारो! आज जो कुछ हिन्दू-धर्म और हिन्दू-जातिकी दुर्दशा हो रही है, वह आपलोगोंसे छिपी नहीं है।

प्रताप—बेशक, महाराज! देशमें दुष्टोंका अत्याचार असह-नीय हो गया है।

शिवाजी—हिन्दुओंकी कन्यायें और हिन्दुओंके बालक विधर्मी बनाये जायं, हिन्दुओंके मन्दिर तोड़े जायं, हिन्दु-ओंके पवित्र देशमें गो-ब्राह्मणकी रक्तधारा बहा दी जाय, मगर हिन्दू लोग अपनी आंखतक न उठायें। तो कितने शोककी बात है?

सब—शोक! शोक!! महाशोक!!!

शिवाजी—आज हमारे पूर्वजोंका यश क्षय हो रहा है, हमारे देशमें हमारी ही गफलतसे प्रलय हो रहा है। क्या अब भी हमको न जागना चाहिये? क्या प्राणोंसे भय खाकर संग्राम क्षेत्रसे भागना चाहिये?

सब—नहीं, नहीं, कभी नहीं।



प्रताप—और महा आश्चर्य्य तो यह है, कि उस दुष्ट औरङ्गजेब-
ने जान-बूझकर दक्षिण प्रान्तपर धावा किया है।
जबतक उसने हमसे कोई छेड़ छाड़ नहीं की, उस
समयतक हमलोगोंका न बोलना कर्तव्य परायणतामें
शामिल था। मगर ऐसे समयमें जब कि दिनपर दिन
हमारे ऊपर नये नये जुल्म ढाये जाते हैं और उसपर
भी हमलोग यवनोंकी ठोकर खाकर चुप रह जायें,
तो हमारी यह सहनशीलता कायरतामें शामिल होगी।

सब—अवश्य होगी।

शिवाजी—अब आपही कहिये, कि ऐसे मौकेपर हमें तलवार
उठाना ठीक है, या नहीं?

सब—ठीक है, और बिल्कुल ठीक है।

[द्वारपालका प्रवेश]

द्वार०—जय हो।

शिवाजी—क्यों? क्या है?

द्वार०—महाराज! आचार्य्य चन्द्रशेखरजी पधारते हैं।

शिवाजी—अहोभाग्य! जाओ जल्दी उन्हें आदरपूर्वक लिवा
लाओ।

द्वार०—जो आज्ञा। (प्रस्थान)

शिवाजी—वीरो! यह वही चन्द्रशेखरजी हैं, जिन्होंने अपनी
सारी सम्पत्ति त्यागकर गेरुआ वस्त्र धारण किया
है, और अपनी सारी शक्ति लगाकर देशोद्धार करने-



का प्रण किया है। अतएव इनका स्वागत करना हमारा परमधर्म है।

[आचार्य्यका प्रवेश]

सब—बोलो आचार्य्य देवकी जय !

शिवाजी—आचार्य्यको प्रणाम।

आचार्य्य—भगवती आपका कल्याण करे।

शिवाजी—कहिये आचार्य्य, कैसे पधारे ?

आचार्य्य—महाराज ! आज आपके लिये हम एक उपहार लाये हैं।

शिवाजी—भला वह क्या ?

आचार्य्य—यवनोंसे युद्ध करनेके लिये सहायता ?

शिवाजी—क्या इस युद्धमें आप भी लोहा उठायेंगे।

आचार्य्य—मेरी अकेली तलवार शायद इतने शत्रुओंका नाश न कर सकेगी।

शिवाजी—तो फिर ?

आचार्य्य—मेरे साथ एक वीर और है।

शिवाजी—उसका नाम ?

आचार्य्य—जगदीशकुमार सिंह।

शिवाजी—क्या वही जगदीशकुमार जिसने देशोपकारके लिये, यवन संहारके लिये, अपना धन-धाम त्यागकर पूर्ण परिश्रमसे महाराष्ट्र वीरोंकी सेना बनाई है ?

आचार्य्य—जी हां, वही जगदीशकुमार।



शिवाजी—वह कहां हैं ?

आचार्य्य—बाहर अपनी सेना सहित उपस्थित हैं ?

शिवाजी—प्रतापराव !

प्रताप—महाराज !

शिवाजी—बाहर जाकर जगदीशकुमारको आदर-सहित दर्बारमें लिवा लाओ।

प्रताप—जो आज्ञा (प्रस्थान)

शिवाजी—आचार्य्य ! इस समय आपने सहायता देकर हमारे ऊपर अनन्त उपकार किया है।

आचार्य्य—महाराज मैंने आपका उपकार कुछ भी नहीं किया बल्कि अपना कर्तव्य पालन किया है। आप स्वदेश-रक्षक हैं इसलिये आपको परमात्मा स्वयं सहायता देते हैं, मैं तो केवल नाम मात्र हूं।

शिवाजी—आपका कहना यथार्थ है परन्तु संसारमें सब कार्य्योंका कारण आवश्य होता है, इसलिये इस सहायता-कार्य्यके मुख्य कारण केवल आप हैं।

आचार्य्य—यह सिर्फ आपकी योग्यता है।

शिवाजी—वीर सर्दारो! बड़ी प्रसन्नताकी बात है कि आज हमारे आचार्य्य हमारे लिये देशभक्त जगदीशकुमारकी सहायता लाये हैं, इसलिये हमको अपनी कोशिशपर प्रसन्न होकर भगवतीके नामकी विजय वाणी करनी चाहिये।

सब—बोलो महामायाकी जय।



[जगदीशकुमारका कुछ साथियों सहित प्रवेश]

कुमार—महाराजको सादर अभिवादन ।

शिवाजी—जय महामायाकी, आओ कुमार ! बैठो ।

[कुमारका साथियों सहित बैठना]

प्रताप—श्रेष्ठ वीरो ! आज कुमारकी सहायता पाकर हमको बड़ा हर्ष हुआ और हम आशा करते हैं कि अब बहुत जल्दी यवनोंका पैर दक्षिण प्रान्तसे उखड़ जायगा । बोलो महामायाकी जय ।

[एक गुप्तचरका प्रवेश]

गुप्तचर—महाराज ! महाराज !!

प्रताप—क्यों, क्यों ? क्या है ?

गुप्तचर—महाराज ! उस दुष्ट शाइस्ताखांने मन्दिरके दो पुजारियोंको क्रोधित होकर प्राण-दण्डकी आज्ञा दी है । और प्रातःकाल मंदिरको तोड़नेकी प्रतिज्ञा की है ।

शिवाजी—आह ! महाअनर्थ ।

प्रताप—क्या उन ब्राह्मणोंका वध हो गया ?

गुप्तचर—नहीं हुआ नहीं, परन्तु होने वाला है ।

शिवाजी—कब ?

गुप्तचर—कल प्रातःकाल ।

शिवाजी—ओ चाण्डाल ! क्या तू इतना अभिमानमें फूल गया कि सरपर आई हुई मौतको भी भूल गया ?! आह शाइस्ताखां ! अगर मैंने तेरी आंखोंसे खूनके आँसू



न बहाये तो मेरी वीरता नहीं, अगर एक एक ब्राह्मणके बदले तेरे एक २ हज़ार यवनोंके टुकड़े न उड़ाये तो मेरा नाम शिवा नहीं।

मेरे हाथोंसे भला छूटकर जायेगा कहां।
ठिकाना अपने तू छिपनेका बनायेगा कहां॥
कलेजा काट कर फेंकूंगा छिपायेगा कहां।
खड़ी है मौत तेरी जान बचायेगा कहां॥
समरमें पीना है मुझको उसी पाजीका खून।
उबल रहा है मुद्दतोंसे शिवाजीका खून॥

सब—(तलवारें निकालकर) महामायाकी जय।

शिवाजी—ठहरो! ठहरो!! मैंने जोशमें आकर युद्धका इराद कर लिया, मगर अपनी सेनाका कुछ ख्याल न किय

कुमार—महाराज सेनाके लिये क्या चिन्ता है? क्या हमा धर्मसे भी बढ़कर शत्रु सेनाकी संख्या है?

प्रताप—ठीक है महाराज! हमें शीघ्र आज्ञा दीजिये कि ह शत्रुओंका मुकाविला करें।

शिवाजी—मेरे सच्चे सहायक! सच्चे देश-भक्त, आजके रोज तुमलोग लड़कर अपनी जान दे दोगे, मगर कल इस देशको कौन बचायेगा इसलिये जो काम करो बुद्धिसे विचारसे बहादुरी दिखाओ, मगर रुपयेमें बारह आने अक्लसे और चार आने तलवारसे।

कुमार—तो क्या हमको अपना जोश ठंढा करना पड़ेगा?

शिवाजी—हर्गिज नहीं ।

प्रतात—युद्ध कब होगा ?

शिवाजी— आज ।

कुमार—किस समय ?

शिवाजी—रात्रिको १२ बजे ।

प्राताप—किस तरह ?

शिवाजी—सुनो, मैं रातको शाइस्ताखांके शयनागारमें जाऊंगा । और शाइस्ताखांका वध करूंगा । उसके मरजानेसे शत्रुओंकी फौज कमजोर पड़ जायगी और हमारी सेना विजय पायेगी ।

सब—बहुत ठीक ।

शिवाजी—क्या यह राय सबको स्वीकार है ?

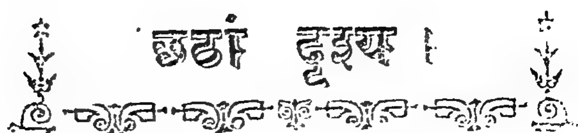
सब—हाँ हाँ; स्वीकार है ।

शिवाजी—अच्छा तो बहुत जल्दी धावा करनेकी तैयारी करो ?

तुम्हारे हाथमें ही तेग खंजर और कटारी है ।
तुम्हारे हाथमें ही शत्रुओंकी जान प्यारी है ॥
तुम्हारी शक्ति सारे शत्रु दलमें प्रलयकारी है ।
तुम्हारे साथ है ईश्वर विजय निश्चय तुम्हारी है ॥
शिवाकी मृत्यु हो जाये तो केवल देश सेवामें ।
तुम्हारी जान भी जाये तो केवल देश सेवामें ॥

[सबका तलवार, उठाना । महामायाकी जय बोलना, टेबला पटाक्षेप]

:स ।
ासे ॥



छठां दृश्य ।

स्थान—मार्ग

[शाइस्ताखांका प्रवेश]

शाइस्ता०—चालाकी, होशियारी, दगा फरेब, यही चीजें इन्सानको तरक्की देती हैं। जिसके पास यह चीजें मौजूद हैं, उसकी ताक़त हजारोंके सामने दूसरे का शाहीताज अपने सरपर ले लेती है। फतह करना क्या किसीके हिस्सेमें हैं ? हर्गिज, नहीं, बहादुरी और सच्ची बहादुरी तो पुरानी तवारीख और पुराने किस्सेमें है। दिलेर वह है जो डाका मारे। शेर वह है जो रातके वक्त, किसी बादशाहत पर छापा मारे हिन्दुओंकी हार क्यों होती है ? भोलेपनसे, हमारी जीत क्यों होती है ? दगा, फरेब, मक्कारीके फनसे।

जमाना हो रहा है आज बे वफाईका ।
बहाता खून है भाई भी अपने भाईका ॥
नहीं तेगोंसे काम चलता है लड़ाईका ।
हमेशा जंगमें है काम बे हयाईका ॥
हमारी जीत है फितरतकी हुक्म रानीसे ।
हमने हिन्दको लूटा है बेइमानीसे ॥

कुमार-

[अब्दुलरहमान और रमजानका प्रवेश]

अब्दुल०—हुजूर! वह तो निकल गया।

शाइस्ता०—क्या कहा? निकल गया?

अब्दुल०—जी हां! निकल गया।

शाइस्ता०—आह! मेरा इरादा मिट्टीमें मिल गया।

रमजान०—क्या करें सरकार! हमने तो बहुत पता लगाया।

अब्दुल०—मगर दुश्मन हाथ न आया।

शाइस्ता०—उस कम्बख्त शिवाजीको हमारी कार्वाईका पता जरूर लग गया होगा?

अब्दुल०—मुमकिन है, कि ऐसा ही हो, मगर हमलोगोंने तो बड़ी होशियारीसे काम किया था।

शाइस्ता०—तुमलोग नासमझ हो। अभी उसकी चालबाजियों-से होशियार नहीं, उसकी तरकीबी लड़ाइयोंसे खबरदार नहीं।

रमजान०—इसमें तो कोई शक नहीं, कि वह मर्दूद हमलोगोंको बात-बातमें धोखा देता है। हमारी सारी कोशिशें बेकार बना देता है।

शाइस्ता०—मगर मुझसे बचकर कहां जायगा? अगर खुदाने चाहा तो बारह घण्टेमें वह मेरे सामने आयेगा।

अब्दुल०—क्या हजूरने कोई नई चाल सोची है?

शाइस्ता०—सोची ही नहीं, बल्कि चल भी दी है।

अब्दुल०—हुजूर! क्या वह चाल हमें भी सुनाई जा[illegible]ग।

[illegible]से ॥

शाइस्ता०--हां, हां, सुनो और अच्छी तरह सुनो। जिस वक्त हमने सुना, कि शिवाजीने एक महीनेके लिये हमसे लड़ना बन्द कर दिया है, उस वक्त, हम समझ गये, कि इस चालमें भी कोई भारी भेद छिपा है।

अब्दुल०—वाहरे हुजूरकी अक्ल!

शाइस्ता०—आखिर मैंने जासूसोंके जरिये मालूम कर लिया, कि शिवाजी मुझे धोखा देकर धावा करने वाला है।

रमजान०—अहा, इतनी हिम्मत?

शाइस्ता०—मगर मैंने भी अपनी चालाकी भिड़ा दी।

अब्दुल०—यानी।

शाइस्ता०—यानी! शिवाजीके मन्दिरके दो पुजारियोंको गिरफ्तार करके उन्हें फांसी चढ़ानेकी इजाजत सुना दी।

अब्दुल०—वाह वाह!

शाइस्ता०—अब अगर शिवाजी यह बात सुनेगा, तो सरपर पांव रखकर दौड़ेगा, क्योंकि शिवाजी बरहमनोंको खूब मानता है। इनलोगोंको वह अपना पीरो मुर्शिद जानता है, अब तुम्हीं कहो कि शिवाजीको बुलानेके लिये यह तर्कीब कारगर है या नहीं?

अब्दुल०—हुजूर! इस तरकीबमें तो जादूका असर है।

रमजान०—अरे, शिवाजी लाख सर पटके मगर हमलोगोंसे पेश नहीं पा सकता।

कुमार-

रमजान—हुजूर! हाथी कितना ही बहादुर हो, मगर शेरके सामने नहीं आ सकता।

शाइस्ता०—खैर तुमलोग आज फौजको आराम दो, और सुबह लड़ाईका पैगाम दो, यह मानी हुई बात है, कि बरहमनोंके कत्लके वक्त शिवाजी ज़रूर आयेगा। और उसी वक्त, हमारे हाथोंसे मारा जायगा।

रमजान० अब्दुल०—जो हुक्म। (प्रस्थान)

शाइस्ता०—आह, शिवाजी! शिवाजी! तूने मुसलमानोंको कमज़ोर समझ रक्खा है, मगर किस भरोसेपर? क्या इस लिये कि मुसलमानोंके पास लड़ाईका हुनर नहीं? क्या इसलिये कि दक्खिनके सूबेमें मुसलमानोंका घर नहीं, मगर भूल जा। इस इरादेको एक दम भूल जा। क्योंकि मैं तुझे हराने नहीं, बल्कि दुनियांसे मिटानेके लिये आया हूं, तू मुझे नहीं जानता, मेरा नाम शाइस्ताखाँ है, तेरे दिलसे मेरा दिमाग बड़ा है।

तू चल हजार चालें मगर कुछ नहीं परवाह।
तुझको फना कर देंगे ये इसलामके सिपाह॥
बारिश करूंगा जुलमकी बनकर घटा सियाह।
पीकर लहूका बूंट तुझे करूंगा तबाह॥
मैं सर तेरा काटूंगा दगा और फरेबसे।
लेकर इनाम छोडूंगा औरङ्गजेबसे॥



[अब्दुलकरीम, मुजफ्फर, मुहम्मद, गुप्तचरोंका प्रवेश]

सब—हुजूर आदाब अर्ज़ ।

शाइस्ता०—क्योंजी मुजफ्फर! क्या खबर लाये ?

मुजफ्फर—सरकार! हमलोग साधू बनकर शिवाजीके दर्बार में गये थे ।

शाइस्ता०—क्या तुमने शिवाजीका दर्बार देखा ?

मुजफ्फर०—जी नहीं, सरकार! यही तो अरमान रह गया ।

शाइस्ता०—क्यों, क्यों, क्या भेद खुल गया ?

अब्दुल०—जी नहीं, भेद तो नहीं खुला, मगर हमलोगोंको पूरा पता नहीं मिला ।

शाइस्ता०—इसकी वजह ।

मुजफ्फर०—हुजूर! पहले तो हमलोगोंने सारा पहाड़ ढूंढ़ डाला, मगर शिवाजीका पता नहीं लगा। आखिर एक सरदार, जो कई सिपाहियोंको अपने साथ लेकर शिवाजीसे मिलने जा रहा था, उसीके साथ हमलोग लग गये, और उस मुकाम तक चले, रियत पहुंच गये ।

शाइस्ता०—फिर क्या हुआ ?

मुजफ्फर०—सरकार। वहां पहुंचते ही वह सरदार साहब तो अन्दर बुला लिये गये, मगर हमलोग बाहर ही टापते रह गये ।

शाइस्ता०—तुमलोगोंने अन्दर जानेकी कोशिश नहीं की ?



मुजफ्फर०—हुजूर, कोशिश तो बहुत की, मगर जा नहीं सके।

शाइस्ता०—खैर फिर भी तो कुछ कामयाबी हुई होगी ?

मुजफ्फर०—जी हां, बहुत कोशिश करनेपर सिर्फ इतना ही मालूम हुआ है, कि कल सुबह तक शिवाजी जङ्ग की तैयारी कर लेंगे, और जहां तक हो सकेगा, आफताब निकलनेके पेश्तर लड़ाई जारी कर देंगे।

शाइस्ता०—वाहरे मैं। मेरी कार्रवाई और फजूल हो जाय ? मेरा निशाना और ख़ाली पड़ जाय ? कभी नहीं; हर्गिज नहीं, जरासी चिनगारीने यह असर दिखाया कि शिवाजीने मजबूरन जंग करनेका इरादा ठहराया, अब तो मैं हूं और शिवा है, या खुदा इस जङ्गमें तेरा ही आसरा है।

मुजफ्फर०—अच्छा, हजूर, हमलोग जांय ?

शाइस्ता०—हां, हां, तुमलोग जाओ, जहांतक हो सके शहरके बाहर सब पहाड़ियोंपर तुमलोग नजर रक्खो, अगर कोई बात मालूम हो तो फौरन खबरकर देना।

मुजफ्फर—बहुत अच्छा। (जाना चाहता है)

शाइस्ता०—ठहरो, और सुनो।

मुजफ्फर—फर्माइये।

शाइस्ता०—अगर कोई ऐसा मौका आ पड़े कि तुम यहांतक न आ सको, तो वहीं फौजमें खबर देकर फौरन जङ्ग शुरू कर देना।



मुजफ्फर—जो हुक्म । (प्रस्थान)

शाइस्ता०—चारों तरफ पहाड़ है—बीचमें गहरीली जमीन है, दुश्मन लोग अगर टोलोंसे हमें घेर लें, तो हमारे ऊपर सख्त मुसीबत आ सकती है। मगर उन्हें क्या खबर, कि शाइस्तखांका तम्बू कहां है, लेकिन नहीं, नहीं, शिवाजी जरूर जानता होगा, कि मैंने फौजें चारों तरफ भेजकर अपनेको सूना कर लिया है। खैर जी। इस मरतबे भाग जायगा तो और कोई चाल निकालूंगा, मगर जो इन्तजाम कर चुका हूं, उसे बदलना अच्छा नहीं। पैरोंको छोड़कर सर के बल चलना अच्छा नहीं, बस ठीक है, और यही ठीक है।

बना है वो शिकार तीरों तेग बरछीका।
हमारे जोशके आतिशमें है कतरा घी का॥
हमारा हाथ सर उडायेगा शिवाजीका।
इरादा ख़ाक़में मिल जायगा शिवाजीका॥

[प्रस्थान]







स्थान—पुष्पवाटिका ।

[प्रभातसुन्दरीका सखियोंके साथ प्रवेश]

गायन ।

झूम झूम कर कलियनके संग ।
उठत उमंग सुपुष्पनके अंग ॥
सखियां सारी, जोवन वारी, आई प्यारी
बागे बिहारी ।
पल पलमें कलरव करते हैं, कोमल विहंग ॥झूम॥

प्रभात—सखी मोहनी, पद्मावती तो ज्योतिषी महाराजको बुलाने गई थी, मगर अभी तक लौटी नहीं ।

मोहनी—शायद ज्योतिषोजीसे गणित विद्या सीखने लग गयी होगी ।

केतकी—क्योंकि वह भी तो पूरी पण्डिताइन है ।

ललिता—अरी वाहरी केतकी ! पद्मावती यहां नहीं है, तो तू उसकी हंसी उड़ाती है ।

केतकी—वाह वाह, चोरका साथी सीना जोर ।

ललिता—रहने दो, रहने दो, अभी पद्मावती आती है तो मैं सब खोलकर कह दूंगी ।



मोहनी—कह दोगी तो क्या होगा ? क्या हम सब पद्मावतीसे बात करनेमें कम हैं ?

ललिता—अच्छा, मैं भी देखूंगी कि पद्मावतीके साथ कैसी ज़ुबान चलती है।

प्रभात—नहीं, नहीं, ललिता ! तू पद्मासे कुछ भी न कहना, नहीं तो वह मुझे परेशान कर देगी।

ललिता—नहीं, नहीं, मैं तो अवश्य कह दूंगी।

प्रभात—अरी कहना है तो फिर कभी कहना मगर आज मेरे कार्य्यमें विघ्न न देना।

मोहनी—प्यारी ! इस ललिताने तो मुझे बिलकुल बेकार हो समझ रखा है।

ललिता—बेकार नहीं तो और क्या ? जब देखो तब हंसी ठठोली किया करती हो न कोई काम न काज।

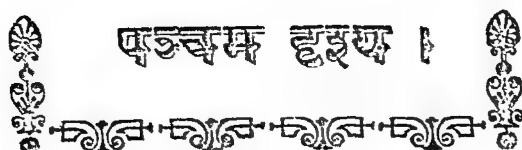
केतकी—यह तो बड़ा काम किया करती है।

ललिता—काम नहीं करती हूं तो क्या ऐसे ही।

मोहनी—अच्छा बता तो भला क्या काम करती है ?

ललिता—मैं तो दिनभर सारा घरका काम किया करती हूं और जब कोई काम नहीं रहता तो श्रीमद्भागवत गीताका पाठ किया करती हूं। समझी ?

केतकी—अरी वाहरी पंडिताइन। सारे संसारके कामोंका ठेका तुम्हींने ले रखा है।



पञ्चम दृश्य ।

स्थान—पहाड़ी गुफा ।

"शिवाजीका दर्बार"

शिवाजी—वीर सरदारो ! आज जो कुछ हिन्दू-धर्म और हिन्दू-जातिकी दुर्दशा हो रही है, वह आपलोगोंसे छिपी नहीं है ।

प्रताप—बेशक, महाराज ! देशमें दुष्टोंका अत्याचार असहनीय हो गया है ।

शिवाजी—हिन्दुओंकी कन्यायें और हिन्दुओंके बालक विधर्मी बनाये जायं, हिन्दुओंके मन्दिर तोड़े जायं, हिन्दुओंके पवित्र देशमें गो-ब्राह्मणकी रक्तधारा बहा दी जाय, मगर हिन्दू लोग अपनी आंखतक न उठायें । तो कितने शोककी बात है ?

सब—शोक ! शोक !! महाशोक !!!

शिवाजी—आज हमारे पूर्वजोंका यश क्षय हो रहा है, हमारे देशमें हमारी ही गफलतसे प्रलय हो रहा है । क्या अब भी हमको न जागना चाहिये ? क्या प्राणोंसे भय खाकर संग्राम क्षेत्रसे भागना चाहिये ?

सब—नहीं, नहीं, कभी नहीं ।



प्रताप—और महा आश्चर्य्य तो यह है, कि उस दुष्ट औरङ्गजेब-ने जान-बूझकर दक्षिण प्रान्तपर धावा किया है। जबतक उसने हमसे कोई छेड़ छाड़ नहीं की, उस समयतक हमलोगोंका न बोलना कर्तव्य परायणतामें शामिल था। मगर ऐसे समयमें जब कि दिनपर दिन हमारे ऊपर नये नये ज़ुलम ढाये जाते हैं और उसपर भी हमलोग यवनोंकी ठोकर खाकर चुप रह जायें, तो हमारी यह सहनशीलता कायरतामें शामिल होगी।

सब—अवश्य होगी।

शिवाजी—अब आपही कहिये, कि ऐसे मौक़ेपर हमें तलवार उठाना ठीक है, या नहीं?

सब—ठीक है, और बिल्कुल ठीक है।

[द्वारपालका प्रवेश]

द्वार०—जय हो।

शिवाजी—क्यों? क्या है?

द्वार०—महाराज! आचार्य्य चन्द्रशेखरजी पधारते हैं।

शिवाजी—अहोभाग्य! जाओ जल्दी उन्हें आदरपूर्वक लिवा लाओ।

द्वार०—जो आज्ञा। (प्रस्थान)

शिवाजी—वीरो! यह वही चन्द्रशेखरजी हैं, जिन्होंने अपनी सारी सम्पत्ति त्यागकर गेरुआ वस्त्र धारण किया है, और अपनी सारी शक्ति लगाकर देशोद्धार करने-



का प्रण किया है। अतएव इनका स्वागत करना हमारा परमधर्म है।

[आचार्य्यका प्रवेश]

सब—बोलो आचार्य्य देवकी जय !

शिवाजी—आचार्य्यको प्रणाम।

आचार्य्य—भगवती आपका कल्याण करे।

शिवाजी—कहिये आचार्य्य, कैसे पधारे ?

आचार्य्य—महाराज! आज आपके लिये हम एक उपहार लाये हैं।

शिवाजी—भला वह क्या ?

आचार्य्य—यवनोंसे युद्ध करनेके लिये सहायता ?

शिवाजी—क्या इस युद्धमें आप भी लोहा उठायेंगे।

आचार्य्य—मेरी अकेली तलवार शायद इतने शत्रुओंका नाश न कर सकेगी।

शिवाजी—तो फिर ?

आचार्य्य—मेरे साथ एक वीर और है।

शिवाजी—उसका नाम ?

आचार्य्य—जगदीशकुमार सिंह।

शिवाजी—क्या वही जगदीशकुमार जिसने देशोपकारके लिये, यवन-संहारके लिये, अपना धन-धाम त्यागकर पूर्ण परिश्रमसे महाराष्ट्र वीरोंकी सेना बनाई है ?

आचार्य्य—जी हां, वही जगदीशकुमार।



प्रताप—और महा आश्चर्य्य तो यह है, कि उस दुष्ट औरङ्गजेब-ने जान-बूझकर दक्षिण प्रान्तपर धावा किया है। जबतक उसने हमसे कोई छेड़ छाड़ नहीं की, उस समयतक हमलोगोंका न बोलना कर्तव्य परायणतामें शामिल था। मगर ऐसे समयमें जब कि दिनपर दिन हमारे ऊपर नये नये जुल्म ढाये जाते हैं और उसपर भी हमलोग यवनोंकी ठोकर खाकर चुप रह जायें, तो हमारी यह सहनशीलता कायरतामें शामिल होगी।

सब—अवश्य होगी।

शिवाजी—अब आपही कहिये, कि ऐसे मौक़ेपर हमें तलवार उठाना ठीक है, या नहीं?

सब—ठीक है, और बिल्कुल ठीक है।

[द्वारपालका प्रवेश]

द्वार०—जय हो।

शिवाजी—क्यों? क्या है?

द्वार०—महाराज! आचार्य्य चन्द्रशेखरजी पधारते हैं।

शिवाजी—अहोभाग्य! जाओ जल्दी उन्हें आदरपूर्वक लिवा लाओ।

द्वार०—जो आज्ञा। (प्रस्थान)

शिवाजी—वीरो! यह वही चन्द्रशेखरजी हैं, जिन्होंने अपनी सारी सम्पत्ति त्यागकर गेरुआ वस्त्र धारण किया है, और अपनी सारी शक्ति लगाकर देशोद्धार करने-



का प्रण किया है। अतएव इनका स्वागत करना हमारा परमधर्म है।

[आचार्य्यका प्रवेश]

सब—बोलो आचार्य्य देवकी जय !

शिवाजी—आचार्य्यको प्रणाम।

आचार्य्य—भगवती आपका कल्याण करे।

शिवाजी—कहिये आचार्य्य, कैसे पधारे ?

आचार्य्य—महाराज ! आज आपके लिये हम एक उपहार लाये हैं।

शिवाजी—भला वह क्या ?

आचार्य्य—यवनोंसे युद्ध करनेके लिये सहायता ?

शिवाजी—क्या इस युद्धमें आप भी लोहा उठायेंगे।

आचार्य्य—मेरी अकेली तलवार शायद इतने शत्रुओंका नाश न कर सकेगी।

शिवाजी—तो फिर ?

आचार्य्य—मेरे साथ एक वीर और है।

शिवाजी—उसका नाम ?

आचार्य्य—जगदीशकुमार सिंह।

शिवाजी—क्या वही जगदीशकुमार जिसने देशोपकारके लिये, यवन-संहारके लिये, अपना धन-धाम त्यागकर पूर्ण परिश्रमसे महाराष्ट्र वीरोंकी सेना बनाई है ?

आचार्य्य—जी हां, वही जगदीशकुमार।



शिवाजी—वह कहां हैं ?

आचार्य्य—बाहर अपनी सेना सहित उपस्थित हैं ?

शिवाजी—प्रतापराव !

प्रताप—महाराज !

शिवाजी—बाहर जाकर जगदीशकुमारको आदर-सहित दर्बारमें लिवा लाओ।

प्रताप—जो आज्ञा (प्रस्थान)

शिवाजी—आचार्य्य ! इस समय आपने सहायता देकर हमारे ऊपर अनन्त उपकार किया है।

आचार्य्य—महाराज मैंने आपका उपकार कुछ भी नहीं किया बल्कि अपना कर्तव्य पालन किया है। आप स्वदेश-रक्षक हैं इसलिये आपको परमात्मा स्वयं सहायता देते हैं, मैं तो केवल नाम मात्र हूं।

शिवाजी—आपका कहना यथार्थ है परन्तु संसारमें सब कार्य्योंका कारण अवश्य होता है, इसलिये इस सहायता-कार्य्यके मुख्य कारण केवल आप हैं।

आचार्य्य—यह सिर्फ आपकी योग्यता है।

शिवाजी—वीर सर्दारो! बड़ी प्रसन्नताकी बात है कि आज हमारे आचार्य्य हमारे लिये देशभक्त जगदीशकुमारकी सहायता लाये हैं, इसलिये हमको अपनी कोशिशपर प्रसन्न होकर भगवतीके नामकी विजय बाणी करनी चाहिये।

सब—बोलो महामायाकी जय।

[जगदीशकुमारका कुछ साथियों सहित प्रवेश]

कुमार—महाराजको सादर अभिवादन।

शिवाजी—जय महामायाकी, आओ कुमार! बैठो।

[कुमारका साथियों सहित बैठना]

प्रताप—श्रेष्ठ वीरो! आज कुमारकी सहायता पाकर हमको बड़ा हर्ष हुआ और हम आशा करते हैं कि अब बहुत जल्दी यवनोंका पैर दक्षिण प्रान्तसे उखड़ जायगा। बोलो महामायाकी जय।

[एक गुप्तचरका प्रवेश]

गुप्तचर—महाराज! महाराज!!

प्रताप—क्यों, क्यों? क्या है?

गुप्तचर—महाराज! उस दुष्ट शाइस्ताखांने मन्दिरके दो पुजारियोंको क्रोधित होकर प्राण-दण्डकी आज्ञा दी है। और प्रातःकाल मंदिरको तोड़नेकी प्रतिज्ञा की है।

शिवाजी—आह! महाअनर्थ।

प्रताप—क्या उन ब्राह्मणोंका वध हो गया?

गुप्तचर—नहीं हुआ नहीं, परन्तु होने वाला है।

शिवाजी—कब?

गुप्तचर—कल प्रातःकाल।

शिवाजी—ओ चाण्डाल! क्या तू इतना अभिमानमें फूल गया कि सरपर आई हुई मौतको भी भूल गया!? आह शाइस्ताखां! अगर मैंने तेरी आंखोंसे खूनके आँसू



न बहाये तो मेरी वीरता नहीं,अगर एक एक ब्राह्मणके वदले तेरे एक २ हज़ार यवनोंके टुकड़े न उड़ाये तो मेरा नाम शिवा नहीं।

मेरे हाथोंसे भला छूटकर जायेगा कहां।
ठिकाना अपने तू छिपनेका बनायेगा कहां॥
कलेजा काट कर फेंकूंगा छिपायेगा कहां।
खड़ी है मौत तेरी जान बचायेगा कहां॥
समरमें पीना है मुझको उसी पाजीका खून।
उबल रहा है मुद्दतोंसे शिवाजीका खून॥

सब—(तलवारें निकालकर) महामायाकी जय।

शिवाजी—ठहरो! ठहरो!! मैंने जोशमें आकर युद्धका इरादा कर लिया, मगर अपनी सेनाका कुछ ख्याल न किया

कुमार—महाराज सेनाके लिये क्या चिन्ता है? क्या हमारे धर्मसे भी बड़कर शत्रु सेनाकी संख्या है?

प्रताप—ठीक है महाराज! हमें शीघ्र आज्ञा दीजिये कि हम शत्रुओंका मुकाबिला करें।

शिवाजी—मेरे सच्चे सहायक! सच्चे देश-भक्त, आजके रोज तुमलोग लड़कर अपनी जान दे दोगे, मगर कल इस देशको कौन बचायेगा इसलिये जो काम करो बुद्धिसे विचारसे बहादुरी दिखाओ, मगर रुपयेमें बारह आने अक्लसे और चार आने तलवारसे।

कुमार—तो क्या हमको अपना जोश ठंढा करना पड़ेगा?



शिवाजी—हर्गिज नहीं ।

प्रतात—युद्ध कब होगा ?

शिवाजी— आज ।

कुमार—किस समय ?

शिवाजी—रात्रिको १२ बजे ।

प्रताप—किस तरह ?

शिवाजी—सुनो, मैं रातको शाइस्ताखांके शयनागारमें जाऊंगा। और शाइस्ताखांका वध करूंगा। उसके मरजानेसे शत्रुओंकी फौज कमजोर पड़ जायगी और हमारी सेना विजय पायेगी।

सब—बहुत ठीक ।

शिवाजी—क्या यह राय सबको स्वीकार है ?

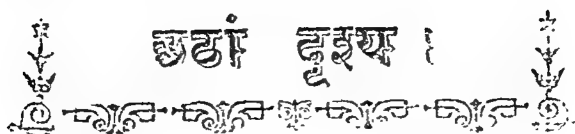
सब—हाँ हाँ; स्वीकार है।

शिवाजी—अच्छा तो बहुत जल्दी धावा करनेकी तैयारी करो !

तुम्हारे हाथमें ही तेग खंजर और कटारी है।
तुम्हारे हाथमें ही शत्रुओंकी जान प्यारी है॥
तुम्हारी शक्ति सारे शत्रु दलमें प्रलयकारी है।
तुम्हारे साथ है ईश्वर विजय निश्चय तुम्हारी है॥
शिवाकी मृत्यु हो जाये तो केवल देश सेवामें।
तुम्हारी जान भी जाये तो केवल देश सेवामें॥

[सबका तलवार, उठाना। महामायाकी जय बोलना, ड्राप पटाक्षेप]





छठां दृश्य ।

स्थान—मार्ग

[शाइस्ताखांका प्रवेश]

शाइस्ता०—चालाकी, होशियारी, दगा फरेब, यही चीजें इन्सानको तरक्की देती हैं। जिसके पास यह चीजें मौजूद हैं, उसकी ताक़त हजारोंके सामने दूसरे का शाहीताज अपने सरपर ले लेती है। फतह करना क्या किसीके हिस्सेमें है? हर्गिज़ नहीं, बहादुरी और सच्ची बहादुरी तो पुरानी तवारीख और पुराने किस्सेमें है। दिलेर वह है जो डाका मारे। शेर वह है जो रातके वक्त, किसी बादशाहत पर छापा मारे हिन्दुओंकी हार क्यों होती है? भोलेपनसे, हमारी जीत क्यों होती है? दगा, फरेब, मक्कारीके फनसे।

ज़माना हो रहा है आज बे वफाईका।
बहाना खून है भाई भी अपने भाईका॥
नहीं तेगोंसे काम चलता है लड़ाईका।
हमेशा जंगमें है काम बे हयाईका॥
हमारी जीत है फितरतकी हुक्म रानीसे।
हमीने हिन्दको लूटा है बेइमानीसे॥



[अब्दुलरहमान और रमजानका प्रवेश]

अब्दुल०—हुजूर! वह तो निकल गया।

शाइस्ता०—क्या कहा? निकल गया?

अब्दुल०—जी हां! निकल गया।

शाइस्ता०—आह! मेरा इरादा मिट्टीमें मिल गया।

रमजान०—क्या करें सरकार! हमने तो बहुत पता लगाया।

अब्दुल०—मगर दुश्मन हाथ न आया।

शाइस्ता०—उस कमबख्त शिवाजीको हमारी कारवाईका पता जरूर लग गया होगा?

अब्दुल०—मुमकिन है, कि ऐसा ही हो, मगर हमलोगोंने तो बड़ी होशियारीसे काम किया था।

शाइस्ता०—तुमलोग नासमझ हो। अभी उसकी चालबाजियों-से होशियार नहीं, उसकी तरकीबी लड़ाइयोंसे खबरदार नहीं।

रमजान०—इसमें तो कोई शक नहीं, कि वह मर्दूद हमलोगोंको बात-बातमें धोखा देता है। हमारी सारी कोशिशें बेकार बना देता है।

शाइस्ता०—मगर मुझसे बचकर कहां जायगा? अगर खुदाने चाहा तो बारह घण्टेमें वह मेरे सामने आयेगा।

अब्दुल०—क्या हजूरने कोई नई चाल सोची है?

शाइस्ता०—सोची ही नहीं, बल्कि चल भी दी है।

अब्दुल०—हुजूर! क्या वह चाल हमें भी सुनाई जायगी।



शाइस्ता०—हां, हां, सुनो और अच्छी तरह सुनो। जिस वक्त हमने सुना, कि शिवाजीने एक महीनेके लिये हमसे लड़ना बन्द कर दिया है, उस वक्त, हम समझ गये, कि इस चालमें भी कोई भारी भेद छिपा है।

अब्दुल०—वाहरे हुजूरकी अक्ल!

शाइस्ता०—आखिर मैंने जासूसोंके जरिये मालूम कर लिया, कि शिवाजी मुझे धोखा देकर धावा करने वाला है।

रमजान०—अहा, इतनी हिम्मत?

शाइस्ता०—मगर मैंने भी अपनी चालाकी भिड़ा दी।

अब्दुल०—यानी।

शाइस्ता०—यानी! शिवाजीके मन्दिरके दो पुजारियोंको गिरफ्तार करके उन्हें फांसी चढ़ानेकी इजाजत सुना दी।

अब्दुल०—वाह वाह!

शाइस्ता०—अब अगर शिवाजी यह बात सुनेगा, तो सरपर पांव रखकर दौड़ेगा, क्योंकि शिवाजी बरहमनोंको खूब मानता है। इनलोगोंको वह अपना पीरो मुर्शिद जानता है, अब तुम्हीं कहो कि शिवाजीको बुलानेके लिये यह तर्कीब कारगर है या नहीं?

अब्दुल०—हुजूर! इस तरकीबमें तो जादूका असर है।

शाइस्ता०—अरे, शिवाजी लाख सर पटके मगर हमलोगोंसे पेश नहीं पा सकता।



रमजान—हुजूर! हाथी कितना ही बहादुर हो, मगर शेरके सामने नहीं आ सकता।

शाइस्ता०—खैर तुमलोग आज फौजको आराम दो, और सुबह लड़ाईका पैगाम दो, यह मानी हुई बात है, कि बरहमनोंके कत्लके वक्त शिवाजी ज़रूर आयेगा। और उसी वक्त, हमारे हाथोंसे मारा जायगा।

रमजान० अब्दुल०—जो हुक्म। (प्रस्थान)

शाइस्ता०—आह, शिवाजी! शिवाजी! तूने मुसलमानोंको कमज़ोर समझ रक्खा है, मगर किस भरोसेपर? क्या इस लिये कि मुसलमानोंके पास लड़ाईका हुनर नहीं? क्या इसलिये कि दक्खिनके सूबेमें मुसलमानोंका घर नहीं, मगर भूल जा। इस इरादेको एक दम भूल जा। क्योंकि मैं तुझे हराने नहीं, बल्कि दुनियांसे मिटानेके लिये आया हूं, तू मुझे नहीं जानता, मेरा नाम शाइस्ताखाँ है, तेरे दिलसे मेरा दिमाग बड़ा है।

तू चल हजार चालें मगर कुछ नहीं परवाह।
तुझको फना कर देंगे ये इसलामके सिपाह॥
बारिश करूंगा जुल्मकी बनकर घटा सियाह।
पीकर लहूका घूंट तुझे करूंगा तबाह॥
मैं सर तेरा काटूंगा दगा और फरेबसे।
लेकर इनाम छोडूंगा औरङ्गजेबसे॥



[अब्दुलकरीम, मुजफ्फर, मुहम्मद, गुप्तचरोंका प्रवेश]

सब—हुजूर आदाब अर्ज़।

शाइस्ता०—क्योंजी मुजफ्फर! क्या खबर लाये?

मुजफ्फर—सरकार! हमलोग साधू बनकर शिवाजीके दर्बार में गये थे।

शाइस्ता०—क्या तुमने शिवाजीका दर्बार देखा?

मुजफ्फर०—जी नहीं, सरकार! यही तो अरमान रह गया।

शाइस्ता०—क्यों, क्यों, क्या भेद खुल गया?

अब्दुल०—जी नहीं, भेद तो नहीं खुला, मगर हमलोगोंको पूरा पता नहीं मिला।

शाइस्ता०—इसकी वजह।

मुजफ्फर०—हुजूर! पहले तो हमलोगोंने सारा पहाड़ ढूंढ़ डाला, मगर शिवाजीका पता नहीं लगा। आखिर एक सरदार, जो कई सिपाहियोंको अपने साथ लेकर शिवाजीसे मिलने जा रहा था, उसीके साथ हमलोग लग गये, और उस मुकाम तक बख़ैरियत पहुंच गये।

शाइस्ता०—फिर क्या हुआ?

मुजफ्फर०—सरकार। वहां पहुंचते ही वह सरदार साहब तो अन्दर बुला लिये गये, मगर हमलोग बाहर ही टापते रह गये।

शाइस्ता०—तुमलोगोंने अन्दर जानेकी कोशिश नहीं की?

मुजफ्फर०—हुजूर, कोशिश तो बहुत की, मगर जा नहीं सके।

शाइस्ता०—खैर फिर भी तो कुछ कामयाबी हुई होगी?

मुजफ्फर०—जी हां, बहुत कोशिश करनेपर सिर्फ इतना ही मालूम हुआ है, कि कल सुबह तक शिवाजी जङ्ग की तैयारी कर लेंगे, और जहां तक हो सकेगा, आफताब निकलनेके पेश्तर लड़ाई जारी कर देंगे।

शाइस्ता०—वाहरे मैं। मेरी कार्रवाई और फजूल हो जाय! मेरा निशाना और ख़ाली पड़ जाय? कभी नहीं; हर्गिज नहीं, जरासी चिनगारीने यह असर दिखाया कि शिवाजीने मजबूरन जंग करनेका इरादा ठहराया, अब तो मैं हूं और शिवा है, या खुदा इस जङ्गमें तेरा ही आसरा है।

मुजफ्फर०—अच्छा, हजूर, हमलोग जांय?

शाइस्ता०—हां, हां, तुमलोग जाओ, जहांतक हो सके शहरके बाहर सब पहाड़ियोंपर तुमलोग नजर रक्खो, अगर कोई बात मालूम हो तो फौरन खबरकर देना।

मुजफ्फर—बहुत अच्छा। (जाना चाहता है)

शाइस्ता०—ठहरो, और सुनो।

मुजफ्फर—फर्माइये।

शाइस्ता०—अगर कोई ऐसा मौका आ पड़े कि तुम यहांतक न आ सको, तो वहीं फौजमें खबर देकर फौरन जङ्ग शुरू कर देना।



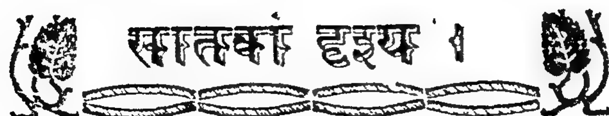
मुजफ्फर—जो हुक्म । (प्रस्थान)

शाइस्ता०—चारों तरफ पहाड़ है—बीचमें गहरीली जमीन है, दुश्मन लोग अगर टोलोंसे हमें घेर लें, तो हमारे ऊपर सख्त मुसीबत आ सकती है। मगर उन्हें क्या खबर, कि शाइस्तखांका तम्बू कहां है, लेकिन नहीं, नहीं, शिवाजी जरूर जानता होगा, कि मैंने फौजें चारों तरफ भेजकर अपनेको सूना कर लिया है। खैर जी। इस मरतबे भाग जायगा तो और कोई चाल निकालूंगा, मगर जो इन्तजाम कर चुका हूं, उसे बदलना अच्छा नहीं। पैरोंको छोड़कर सर के बल चलना अच्छा नहीं, बस ठीक है, और यही ठीक है।

बना है वो शिकार तीरों तेग बरछीका।
हमारे जोशके आतिशमें है कतरा घी का॥
हमारा हाथ सर उड़ायेगा शिवाजीका।
इरादा खाक़में मिल जायगा शिवाजीका॥

[प्रस्थान]





सातवाँ दृश्य ।

स्थान—पुष्पवाटिका ।

[प्रभातसुन्दरीका सखियोंके साथ प्रवेश]

गायन ।

झूम झूम कर कलियनके संग ।
उठत उसंग सुपुष्पनके अंग ॥
सखियां सारी, जोवन वारी, आई प्यारी
बागे बिहारी ।
पल पलमें कलरव करते हैं,कोमल विहंग ॥झूम॥

प्रभात—सखी मोहनी, पद्मावती तो ज्योतिषी महाराजको बुलाने गई थी, मगर अभी तक लौटी नहीं ।

मोहनी—शायद् ज्योतिषीजीसे गणित विद्या सीखने लग गयी होगी ।

केतकी—क्योंकि वह भी तो पूरी पण्डिताइन है ।

ललिता—अरी वाहरी केतकी ! पद्मावती यहां नहीं है, तो तू उसकी हंसी उड़ाती है ।

केतकी—वाह वाह, चोरका साथी सीला जोर ।

ललिता—रहने दो, रहने दो, अभी पद्मावती आती है तो मैं सब खोलकर कह दूंगी ।



मोहनी—कह दोगी तो क्या होगा ? क्या हम सब पद्मावतीसे बात करनेमें कम हैं ?

ललिता—अच्छा, मैं भी देखूंगी कि पद्मावतीके साथ कैसी जुबान चलती है।

प्रभात—नहीं, नहीं, ललिता ! तू पद्मासे कुछ भी न कहना, नहीं तो वह मुझे परेशान कर देगी।

ललिता—नहीं, नहीं, मैं तो अवश्य कह दूंगी।

प्रभात—अरी कहना है तो फिर कभी कहना मगर आज मेरे कार्य्यमें विघ्न न देना।

मोहनी—प्यारी ! इस ललिताने तो मुझे बिलकुल बेकार ही समझ रखा है।

ललिता—बेकार नहीं तो और क्या ? जब देखो तब हंसी ठठोली किया करती हो न कोई काम न काज।

केतकी—यह तो बड़ा काम किया करती है।

ललिता—काम नहीं करती हूं तो क्या ऐसे ही।

मोहनी—अच्छा बता तो भला क्या काम करती है ?

ललिता—मैं तो दिनभर सारा घरका काम किया करती हूं और जब कोई काम नहीं रहता तो श्रीमद्भागवत गीताका पाठ किया करती हूं। समझी ?

केतकी—अरी वाहरी पंडिताइन। सारे संसारके कामोंका ठेका तुम्हींने ले रखा है।



ललिता—अरी तुम क्या जानों मैंने तुम्हारे ऐसी कितनों ही को पंडिताइन बना दिया।

मोहनी—धन्य हो, गुरुवाइनजी, धन्य हो।

केतकी—प्यारी प्रभात! इसका विवाह भी किसी षट शास्त्रीसे करना पड़ेगा।

ललिता—ना, ना, मैं अपना विवाह तो कभी न करूंगी।

मोहनी—विवाह न करेगी तो क्या कुंवारी रहेगी?

ललिता—अरी मैं तो जोगिन बनूंगी, जोगिन।

केतकी—भला जोगिन बनकर क्या करेगी?

ललिता—अरी जोगिन बनकर देशोद्धार करूंगी।

मोहनी—अरी वाहरी नेतानीजी महरानी! भला देशोद्धारसे तुझे क्या मतलब?

ललिता—बात यह है कि देशोद्धार हमारी प्रभातको बहुत अच्छा लगता है, इसलिये उन्हें प्रसन्न करनेका यही रास्ता है।

केतकी—अच्छा अब समझमें आया कि तू भी जगदीशकुमार बनकर प्रभातसे शादी करेगी।

प्रभात—अरी वाहरी बेहया, दिनपर दिन चौगुनी होती जाती है।

ललिता—प्यारी चौगुनी कहां? ललिता तो बड़ी हुई जाती है।

[पद्मावतीका प्रवेश]

पद्मा०—क्यों प्यारी! इस समय तो खूब हास्य हो रहा है।

प्रभात—यह तो तुम्हारे आनेका स्वागत मनाया जा रहा है।

पद्मा०—अहो भाग्य।

प्रभात—परन्तु प्यारी पद्मावती! ज्योतिषीजीको तो नहीं लाई?

पद्मा०—उन्होंने यहां आनेसे इनकार कर दिया।

प्रभात—यह क्यों?

पद्मा०—दक्षिणा बहुत बड़ी मांगते थे, अस्तु मैंने उन्हें सफा जवाब दे दिया।

प्रभात—भला वह दक्षिणा क्या थी?

पद्मा०—प्यारी, दक्षिणा एक कुंवारी कन्या थी।

मोहनी—क्या कन्या?

पद्मा०—हां हां, कन्या।

केतकी—तो ले क्यों नहीं आई,यहां तो बहुत सी कुंवारी कन्या उपस्थित हैं, किसीको दे देती।

पद्मा०—तो क्या तुममेंसे कोई कन्या ज्योतिषीजीको वरनेके लिये तैय्यार है?

सब—(चुप रहती हैं)

ललिता—अरी बोलती क्यों नहीं, क्या मुंहपर ताला पड़ गया?

मोहनी—बड़ी बहादुर है, तो तू ही बोल न औरोंसे क्या कहती है?

ललिता—वाहरी सच्ची सहेलियों! क्या इन्हीं बातोंपर फूलती थीं। पद्मावती! तुम जाओ,ज्योतिषीजीको बुला लाओ अगर यह सब इनकार करती हैं तो मैं उनसे विवाह करूंगी।

पद्मा०—क्या सच ?

ललिता—हां, हां, मैं सच कहती हूं कि अपनी प्यारी सुन्दरी प्रभातके लिये मैं ज्योतिषीजीसे शादी करनेको तैय्यार हूं ।

पद्मा०—शाबाश मेरी प्यारी सखी, शाबाश । प्यारी अबतक तो मैं हंसी करती थी ! लेकिन ज्योतिषीजी द्वारपर उपस्थित हैं ।

सब—क्या सचमुच तुम हंसी करती थी ।

पद्मा०—हां, हां ।

सब—तो उन्हे बुला लाओ हम सब उनसे विवाह करेंगी ।

पद्मा०—बस बस रहने दो, तुम्हारी वीरता देख ली । (प्रस्थान)

मोहनी—सखी केतकी ! आज तो ललिता बाजी मार ले गई ।

केतकी—भई वह तो देशके लिये जोगिन बन चुकी है, फिर उसे क्या कमी है ?

प्रभात—नहीं, नहीं, सखियों ! यह माना, कि ललिता अभी सांसारिक व्यावहारोंमें कच्ची है, मगर निस्वार्थ प्रेम करनेमें उदार है, सच्ची है । (पद्माका ज्योतिषी सहित प्रवेश)

पद्मा०—आइये महाराज !

गोविन्द—श्रीगोविन्दाय नमो नमः........

प्रभात—महाराज ! प्रणाम ।

गोविन्द—प्रसन्न रहो ! सौभाग्यवती हो कुमारी । श्रीगोविन्दाय०

प्रभात—महाराज ! मैंने सुना है, कि आप ज्योतिषके बड़े



भारी विद्वान हैं, अस्तु हमारी हस्त-रेखा देखकर बतलाइये कि........

सब—इनका स्वामी मिलेगा या नहीं ?

गोविन्द—हः हः ! जानता तो मैं भूत, भविष्य, वर्तमान तीनों काल हूं, परन्तु भाग्यके चक्करसे पूरा कङ्गाल हूं। श्रीगोविन्दाय नमो नमः.........

प्रभात—नहीं महाराज ! यह तो आपका केवल भ्रम है, नहीं तो विद्वान क्या किसी राजासे कम है।

गोविन्द—कुमारी ! मैं राजा तो हूं, मगर मेरे सरपर राजाओंका ताज़ नहीं है।

पद्मा०—अच्छा जब राजा बन गये हैं, तो ताज़ भी मिल जायगा, इस समय तो कमाल दिखलाइये।

गोविन्द—इसमें कौनसी बड़ी बात है, हाथ आगे बढ़ाइये। और कमाल देखते जाइये।

पद्मा०—प्यारी ! अपना हाथ दिखाओ तो।

मोहनी—महाराज ! देखिये इस हाथमें क्या है ?

गोविन्द—(स्वगत) हाय, हाय,—

प्रश्न तो बेढब है, और इस भाग्यमें है; कालिमः।
किन्तु उत्तर देता हूं,श्रीगोविन्दाय नमो नमः......॥

पद्मा०—ज़रा ठीक गणित विचारियेगा, महाराज !

गोविन्द—अरे गणित तो सोलह आना ठीकम ठीक है। श्रीगोविन्दाय नमो नमः.........



पद्मा०—महाराज ! आप तो केवल गोविन्दाय नमो नमःकी रट बाँधे हुए हैं, फल तो बतलाइये ।

गोविन्द—अरे फल बतलाना क्या कोई खेलवाड़ है, श्री· श्रीगोविन्दाय नमो नमः...जब बात समझमें आ जायगी तो फल, फूल पत्ती, पेड़,शाखा सब मालूम हो जायगी । श्रीगोविन्दाय नमो नमः.........देखो यह धनकी रेखा है, और यह देखो, आयुकी रेखा है, श्रीगो०......... और यह सुखकी रेखा है। श्रीगोविन्दाय०........

पद्मा०—अरे बस महाराज ! बस, यह व्यर्थकी रेखाओंको समझकर हम क्या करेंगे, हमको तो केवल इनके प्रेमीकी बात सुनाइये ।

गोविन्द—हाय, हाय, तुमने बीचमें प्रश्न करके हमारा सारा गणित भुला दिया , श्रीगोविन्दाय नमो नम;......

पद्मा०—अच्छा देवता, क्षमा कीजिये, अब नहीं बोलूंगी ।

गोविन्द—अच्छा सुनो ! मनसा, वाचा, कर्मणा, इन तीनोंसे सुनो। कुमारीको कुछ दिनोंके लिये थोड़ा भीतरी दुःख उत्पन्न होगा, श्रीगोविन्दा०......उसके बाद इनका एक वीर पुरुषके साथ विवाह होगा। और उस पुरुषके नाममें पहला अच्छर 'ज' ऐसा पड़ेगा श्रीगो०...

पद्मा०—क्या बतलाया महाराज ? आदिका अक्षर 'ज' ?

गोविन्द—हां, हां ! ज, ज, ज, च,छ,ज, श्रीगोविन्दाय०......

पद्मा०—तब तो निश्चय ही जगदीशकुमार इनके पति होंगे ।



गोविन्द—और भी सुनो श्रीगोविन्दाय०.........

पद्मा०—कहिये, कहिये, शीघ्र कहिये महाराज!

गोविन्द—कार्त्तिककी पूर्णमासीको संध्या समय इसी पुष्प वाटिकामें इनको इनके पतिका पहिला दर्शन होगा। श्रीगोबिन्दाय नमो नमः.........

पद्मा०—क्या कार्त्तिककी पूर्णमाको?

गोविन्द—हां, हां, भादो, कुआर, कार्तिककी पूर्णमाको श्रीगोविन्दाय नमो नमः.........

केतकि—अरी पद्मा, कार्त्तिककी पूर्णमा तो आज ही है।

पद्मा०—ज्योतिषीजी! क्या कार्त्तिककी पूर्णमा आज ही है?

गोविन्द—भाई, यह तो मुझे ख्याल नहीं है। श्रीगोविन्दाय०......

पद्मा०—वाह महाराज! आप ज्योतिषी होकर इतना भी याद नहीं रखते?

गोविन्द—अरे याद तो सब था, मगर तुमलोगोंकी चांव चांवमें सब भूल गया।

पद्मा०—तो इसी प्रकार कहीं हस्त-रेखामें भी न भूल गये हों?

गोविन्द—नहीं, नहीं, उसमें मैं कभी भूल सकता हूं? अरे राम, राम, राम।

पद्मा०—तो फिर पूर्णमासी कब है?

मोहनी—पूर्णमासी तो आज है, आज।

ललिता—हां, हां, आज मेरे यहां कार्त्तिकेय पूजा हुई थी?

पद्मा०—तब तो निश्चय आज ही है।



प्रभात—और संध्या भी हो गई है।

प्रज्ञा०—इसमें कोई संदेह नहीं है, कि ज्योंतिषीजीके विचारानुसार कुमार इसी समय पधारेंगे।

केतकी—प्यारी! मेरी राय है, कि कुमारको वागमें चारों तरफ ढूंढ़ना चाहिये।

प्रज्ञा०—लेकिन ऐसा न हो कि हमलोग उधर ढूढ़ने जायं और वह इधरसे निकल जायं।

ललिता—अरे निकल कैसे जायं? ज्योतिषीजीको पहरेपर बैठा दो।

सब—ठीक है, ठीक है।

प्रज्ञा०—ज्योतिषीजी महाराज! आप यहां बैठकर चारों तरफ नज़र रखियेगा, यदि कुमार इधरसे जायं तो उनको रोक रखियेगा।

गोविन्द—अरे वाह। मैं यहां हस्त-रेखा देखने आया हूं, कि जमादारी करने।

प्रज्ञा०—महाराज! जमादारी नहीं, हमलोगोंपर उपकार कीजिये।

गोविन्द—अच्छा जी, मुसीवतमें तो राजा हरिशचन्द्र डोम बने थे, तो मुझे जमादार वननेमें क्या हर्ज है। श्रीगोविन्दाय नमो नमः।

प्रज्ञा०—महाराज, हम जायं।

गोविन्द—हां, हां, जाओ।



[सब जाना चाहती हैं]

गोविन्द—अरे जरा ठहरो तो।

पद्मा०—कहिये।

गोविन्द—ज़रा कानमें सुनो।

पद्मा०—कहिये (कानमें सुनती है,)

गोविन्द—भला इस निर्जन स्थानमें कोई भूत प्रेत तो नहीं रहता ?

पद्मा०—अरे नहीं, नहीं, महाराज ! यह तो देवीका स्थान है, यहां भूत प्रेत कहां ?

गोविन्द—हां ऐसा है, तो पधारिये, श्रीगोविन्दाय०.........

पद्मा०—देखिये कहीं भय न खा जाइयेगा।

गोविन्द—अरे नहीं, नहीं, मैं अभी मंत्रोचारण करता हूं, श्रीगोविन्दाय नमो नमः.........

[सब सखियोंका प्रस्थान]

गोविन्द—(स्वगत) भाई, आया था फल बताने, करने लगा, चौकीदारी, श्रीगो०......परन्तु पूजा अच्छी मिलेगी। श्रीगोविन्दाय नमो नमः। हाय, हाय, इस शून्य स्थानमें चुप रहनेसे भय मालूम होता है, श्रीगो०...अरे यार फाल्तू बैठे बैठे कुछ गुन गुनायें।

[गाता है,]

भजु मन गोविन्दम् गोविन्द नारायण।
आज पूनम दिवसका है, पारायण ॥ भजुमन गो० ॥



[कुमारका प्रवेश]

कुमार—महाराज ! प्रणाम ।

गोविन्द—आशीर्वाद, श्रीगोविन्दाय……

कुमार—महाराज ! रायगढ़का मार्ग किधर है ?

गोविन्द—आप कौन हैं, आपका नाम क्या है ?

कुमार—मेरा नाम जगदीशकुमार है ।

गोविन्द—हैं ! जगदीशकुमारसिंह ? श्रीगोविन्दाय०……

कुमार—हां, महाराज ।

गोविन्द—(स्वगत) चलो भाई ! चूहा तो फंस गया, अब बिल्लीको बुलाना चाहिये ।

कुमार—क्या सोचते हो महाराज !

गोविन्द—अरे कुमार, आपको तो हम ढूंढ़ ही रहे थे, श्रीगो०… बहुत अच्छा हुआ, जो आप आ गये, श्रीगोविन्दाय०… अस्तु, अब आप यहीं ठहरिये । श्रीगोविन्दाय०…… मैं उन्हें यहां बुलाये लाता हूं, श्रीगोविन्दाय०……

कुमार—अरे किसे बुलाते हो, किसे बैठाते हो ?

गोविन्द—(चिल्लाकर) अरे भाई, जल्दी दौड़ो, शिकार फंस गया । श्रीगोविन्दाय०……

कुमार—(स्वगत) हैं, शिकार फंस गया ! कहीं यह मुसलमानोंका जासूस तो नहीं है, (गोविन्दसे) बोल, बोल, नीच ! क्या तूं शत्रुओंके हाथमें मुझे पकड़वाना



[सब जाना चाहती हैं]

गोविन्द—अरे जरा ठहरो तो।

पद्मा०—कहिये।

गोविन्द—ज़रा कानमें सुनो।

पद्मा०—कहिये (कानमें सुनती है,)

गोविन्द—भला इस निर्जन स्थानमें कोई भूत प्रेत तो नहीं रहता ?

पद्मा०—अरे नहीं, नहीं, महाराज ! यह तो देवीका स्थान है, यहां भूत प्रेत कहां ?

गोविन्द—हां ऐसा है, तो पधारिये, श्रीगोविन्दाय०........

पद्मा०—देखिये कहीं भय न खा जाइयेगा।

गोविन्द—अरे नहीं, नहीं, मैं अभी मंत्रोचारण करता हूं, श्रीगोविन्दाय नमो नमः........

[सब सखियोंका प्रस्थान]

गोविन्द—(स्वगत) भाई, आया था फल बताने, करने लगा, चौकीदारी, श्रीगो०......परन्तु पूजा अच्छी मिलेगी। श्रीगोविन्दाय नमो नमः। हाय, हाय, इस शून्य स्थानमें चुप रहनेसे भय मालूम होता है, श्रीगो०...अरे यार फालतू बैठे बैठे कुछ गुन गुनायें।

[गाता है,]

भजु मन गोविन्दम् गोविन्द् नारायण।
आज पूनम दिवसका है, पारायण ॥ भजुमन गो० ॥



[कुमारका प्रवेश]

कुमार—महाराज ! प्रणाम ।

गोविन्द—आशीर्वाद, श्रीगोविन्दाय……

कुमार—महाराज ! रायगढ़का मार्ग किधर है ?

गोविन्द—आप कौन हैं, आपका नाम क्या है ?

कुमार—मेरा नाम जगदीशकुमार है ।

गोविन्द—हैं ! जगदीशकुमारसिंह ? श्रीगोविन्दाय०……

कुमार—हां, महाराज ।

गोविन्द—(स्वगत) चलो भाई ! चूहा तो फंस गया, अब बिल्लीको बुलाना चाहिये ।

कुमार—क्या सोचते हो महाराज !

गोविन्द—अरे कुमार, आपको तो हम ढूंढ़ ही रहे थे, श्रीगो०… बहुत अच्छा हुआ, जो आप आ गये, श्रीगोविन्दाय०… अस्तु, अब आप यहीं ठहरिये । श्रीगोविन्दाय०…… मैं उन्हें यहां बुलाये लाता हूं, श्रीगोविन्दाय०……

कुमार—अरे किसे बुलाते हो, किसे बैठाते हो ?

गोविन्द—(चिल्लाकर) अरे भाई, जल्दी दौड़ो, शिकार फंस गया । श्रीगोविन्दाय०……

कुमार—(स्वगत) हैं, शिकार फंस गया ! कहीं यह मुसलमानोंका जासूस तो नहीं है, (गोविन्दसे) बोल, बोल, नीच ! क्या तूं शत्रुओंके हाथमें मुझे पकड़वाना



चाहता है ? ठहर जा, तेरा काल अभी तेरे सर पर आता है। (तलवार निकालकर)

गोविन्द—(चिल्लाकर) अरे भाई दौड़ो, यह ज्योतिषी ब्राह्मण मारा जाता है। श्रीगोविन्दाय०……

कुमार—बस, चाण्डाल! अब तेरा फैसला है।

(सब सहेलियां आती हैं) क्या है, क्या है, क्या है?

पद्मा०—कौन! कुमार!!

कुमार—हे कर्तार, (प्रभातको देखकर तलवार गिर जाती है)

प्रभात—अः हा!

सब—वाह, वाह।

पद्मा०—ज्योतिष वो ज्योतिषीकी बात सत्य हो गई।
प्रीतमसे कुमारीकी मुलाकात हो गई॥

गोविन्द—मेरा तो प्राणान्त हो, और इनका प्रेम समागमः।
मौतसे मैं बच गया, श्रीगोविन्दाय नमो नमः॥

[प्रभात० और कुमारके नैन लड़ जाते हैं, सहेलियां सब चिढ़ाती हैं, और ज्योतिषीजी सब सहेलियोंसे किलोल करते हैं]

पटाक्षेप।





आठवाँ दृश्य .

स्थान—मार्ग .

[अब्दुलकरीम, मुजफ्फर, मुहम्मद, जासूसोंका प्रवेश]

अब्दुल—यार मुजफ्फर, ग्यारह तो बज गये, मगर अभी कोई नई खबर नहीं मिली, जो खाँ साहब तक पहुंचायी जाय।

मुजफ्फर—अजी एक घण्टे बाद जब आधी रात हो जायगी, तो घर चलकर आराम करेंगे, खबर न मिले तो भाड़में जाय।

मुहम्मद—अरे यार, जिन्दगी भर खबर सुनाते सुनाते जुबान घिस गई, मगर किस्मत कभी न खुली। जब देखो तब मवालीके मवाली ही बने रहे।

अब्दुल—अमां, यह जासूसीका पेशा ही ऐसा है, इस कामको करनेवाला हमेशा कङ्गाल ही बना रहता है।

मुजफ्फर—अबे! तुम्हारे जैसा कङ्गाल हमेशा कङ्गाल ही बना रहता है। वरना हमारे इस काममें हमेशा छक्के पञ्जे रहते हैं।

मुहम्मद—अबे, झूठ क्यों बोलता है? बोल तो सही, कि तूने आजतक इस पेशेमें कितना कमाया है?



मुजफ्फर—अबे सुन ! दिल्लीकी लूटमें मैंने पचास हजार अश-र्फियोंका माल पाया।

मुहम्मद, अब्दुल—क्या पचास हजार !

मुजफ्फर—अबे, हां हां, पचास हजार।

मुहम्मद—धत्तेरा बाप मरे, या खुदा! इस टुकड़ गधेको पचास हजार, और मुझे पचास कौड़ियां भी दुश्वार, वाहरे परवरदिगार, तेरा कारखाना भी अजब ढंगका है।

मुजफ्फर—अबे इसमें खुदाका क्या कसूर है, जिसको जैसी किस्मत होती है, उसको वैसी ही जायदाद मिलनेका दस्तूर है।

अब्दुल—अबे तो क्या हमलोग तुझसे किस्मतमें कम हैं?

मुजफ्फर—बेशक।

मुहम्मद—यह किस कदर?

मुजफ्फर—अबे तुम दोनों मेरे मातहत हो, और मैं तुम दोनोंका अफ़सर।

अब्दुल—अबे तू अफसर है, तो अपने कामका या हमलोगोंकी इज्जतका?

मुजफ्फर—देखो, जुबान सम्हालकर बातें करो, नहीं तो इसी वक्त, नौकरीसे खारिज कर दूंगा।

मुहम्मद—अबे जा, जा, बड़ा आया नौकरीसे खारिज करनेवाला एक झापड़ मारूंगा तो छठीका दूध याद करा दूंगा,

मुजफ्फर—अबे नमक हराम ! तू बढ़ता ही चला जाता है।



मुहम्मद—अबे अबकी बोला तो कच्चा ही चबा जाऊंगा।

मुजफ्फर—साले तू ऐसे नहीं मानेगा।

अब्दुल—अबे कमीने, क्या शामत आई है?

मुजफ्फर—अच्छा तो सम्हल जा।

[तलवार निकालना।]

मुहम्मद—आ जा।

[तीनोंका लड़ते, लड़ते, विंगमें चला जाना।]

[गोविन्दका प्रवेश।]

गोविन्द—श्रीगोविन्दाय नमो नमः.........! शामके गये गये ग्यारह बजे रातको फुर्सत पाई; मगर एक हज़ार अशर्फियोंकी दक्षिणा भी तो आई! श्रीगोविंदाय०... चलोजी अच्छा हुआ, कुमारी और कुमारका प्रेम हुआ, और हमारा काम बना। अब जिस दिन दोनोंका विवाह हो जायगा, उस दिनसे गोविन्दराव राज दर्बारका पुरोहित कहलायेगा। श्रीगोवि०......

एक हज़ार अशर्फियोंको बैंकमें कर दूं जमः।
सुखी होकर तब कहूं, श्रीगोविंदाय०.........

[नेपथ्यमें।]

मुहम्मद—अरे बेवकूफ यह क्या किया?

अब्दुल—यार धोखेसे मर गया।

मुहम्मद—अच्छा इसे इसी सड़कपर ले चलो।

अब्दुल—तो फिर उठाओ न, उठाओ।



गोविन्द—अरे यहलोग कौन है ? श्रीगोविन्दाय०........ कोई डाकू या चोर तो नहीं है। (देखकर) अरे यह तो संन्यासी हैं, परन्तु हाथमें तलवार है। अररर समझा, समझा, समझा! यह उसी शाइस्ता खांके जासूस हैं। अब क्या करूं ? मुझे देख लेंगे तो सदेह स्वर्ग पहुंचा देंगे। श्रीगोविन्दाय नमो नमः। अस्तु यहांसे भाग जाऊं और शहरके दूसरे फाटकसे अपने घर चला जाऊं।

आ पड़ी कैसी भयंकर आपदा इस मार्ग मः।
भाग जाना चाहिये श्रीगोविंदाय०........"

[मुहम्मद, अब्दुलका मुजफ्फरकी लाश समेत प्रवेश]

मुहम्मद—यहीं इस लाशको रख दो।

अब्दुल—मगर खां साहबसे क्या कहेंगे ?

मुहम्मद—घबड़ाओ नहीं मैं एक तरकीब करता हूं।

अब्दुल—वह क्या ?

मुहम्मद—इस लाशको यहां रखकर आओ हमलोग आड़में छिप जायं और जो कोई इस रास्तेसे निकले उसीके गले पड़ जायं कि तुम्हींने इसे मारा है।

अब्दुल—भई वाह! तूने तो खूब रास्ता विचारा है।

मुहम्मद—या खुदा! तेरा सहारा है।

अब्दुल—आओ छिप जायं।

मुहम्मद—हां, हां, जल्दी छिप जाओ।

अब्दुल—भेज मौला ! किसी उल्लूबसंतको ।

[छिपना—गोविन्दका प्रवेश।]

गोविन्द—श्रीगोविन्दाय नमो नमः। इधरसे भागा तो दरवान जागा, उसने फाटकके अन्दर घुसनेका घूस मांगा। आखिरकार यह गोविन्द अभागा उसी रास्तेमें आ पड़ा, परन्तु अबकी बार तो सन्नाटा है। मालूम होता है, कि वे सब चले गये। खैरजी! अब अपने को भी चलना चाहिये। श्रीगोविन्दाय०...... (लाश देखकर) हैं! यह क्या ? (अब्दुल—मुहम्मद प्रकट होकर) खून किया।

गोविन्द—अरे किसने ?

अ० मु०—तूने।

गोविन्द—क्या मैंने ?

अ० मु०—हां, हां, तूने।

गोविन्द—चलो भाई! जिन्दगीका बीमा हो चुका श्रीगो०...... अरे भाई! मेरे हाथमें तो कोई हथियार नहीं है, फिर खामखाही खून कर डाला। श्रीगोविन्दाय०.........

मुहम्मद—अबे चुप बे पाजी! हमारे सामने खून किया, और हमीसे चालबाजी।

गोविन्द—वाह, भाई वाह, यह तो सत्यहरिश्चन्द्रका पोता मालूम होता है। श्रीगोविन्दाय०......



अब्दुल—बस अब ज्यादा बातें न बना! चुप चाप हमारे हाथों गिरफ्तार होजा।

गोविन्द—(स्वगत) अरे यारो! युधिष्ठिर महाराजको दुर्योधन गालियां बक रहा है, तुमलोग सुनते भी नहीं?

अब्दुल—बोल सीधेसे! गिरफ्तार होता है, या तलवार निकालूं?

गोविन्द—अरे भाई! तलवार क्यों निकालते हो, तुम यहांसे दो कदम पीछे हट जाओ मैं खुद मरा जाता हूं।

मुहम्मद—वाह बे! हमें चकमा देता है?

गोविन्द—अरे भाई! इसमें चकमेकी क्या बात है? विश्वास न हो तो अभी नीमतल्ले घाट पहुंचा दो,श्रीगो०......

अब्दुल—रहने दे, रहने दे, मैं तेरी सब होशियारी जनता हूं।

मुहम्मद—बोल! अब कैद होता है, या नहीं?

गोविन्द—अरे मित्रों! जब तुम इतने स्वागतके साथ मुझे कैद करते हो तो मैं तैय्यार हूं, श्रीगोविन्दय०......

अब्दुल—मुहम्मद! तुम इसे कैद करके यहां बैठो, मैं फौजसे सिपाहियोंको बुला लाता हूं, और इसे उन्हींके साथ भेज दूंगा।

मुहम्मद—बहुत ठीक! (हथकडी डालना चाहता है।)

गोविन्द—अरे यार, हथकडी क्यों डालते हो मैं कहीं भागूंगा थोड़े ही श्रीगोविन्दाय०.........

मुहम्मद—और अगर भाग गया तो?



गोविन्द—अरे यार,मैं तो वेहथियार हूं, लेकिन तुम हथियार वाले होकर मुझसे इतना डरते हो। शेर होकर चूहोंसे खौ.फ खाते हो, श्रीगोविन्दाय०.........

मुहम्मद—अच्छा, भाई अब्दुल तुम जाओ, मैं इसे लेकर वैठा हूं।

अब्दुल—देखो! कहीं छूट न जाय।

मुहम्मद—नहीं जी, कोई खेलवाड़ थोड़े ही है।

अब्दुल—अच्छा, मैं जाता हूं।

(प्रस्थान)

गोविन्द—यारो लोग सच कहते हैं, कि आधीरातको घरसे वाहर निकलना बुरा होता है

मुहम्मद—(स्वगत) अच्छा उल्लू फंसा।

गोविन्द—क्यों भाई सिपाही?

मुहम्मद—क्या है, वे?

गोविन्द—अरे यार, जरा सीधेसे वोलो काटे क्यों खाते हो, श्रीगोविन्दाय०............

मुहम्मद—क्या तेरे वापका नौकर हूं, जो सीधेसे वोलूं?

गोविन्द—अच्छा जनाव, आप कुत्तेकी पूंछकी तरह टेढ़े होकर वोलिये श्रीगोविन्दाय०......

मुहम्मद—चुप चाप वैठ रह।

गोविन्द—अरे मित्र! एक वात तो सुनो।

मुहम्मद—क्या है?

गोविन्द—देखो, अगर तुम मुझे छोड़ दो, तो मेरे पास एक



ऐसी करामात है, कि जिससे तुम्हें हजारों रुपये मिल सकते हैं।

मुहम्मद—क्यों वे! फिर वही झांसा।

गोविन्द—अरे, झांसा नहीं; मैं सच कहता हूं।

मुहम्मद—मगर मुझे यकीन कैसे हो?

गोविन्द—आजमाइश करलो।

मुहम्मद—अच्छा, तो पहले नमूना दिखाओ।

गोविन्द—अच्छा, तुम मेरा हाथ ज़ोरसे पकड़ लो, जिससे मैं भाग न सकूं, और एक टक निगाहसे जमीनकी तरफ देखो, मैं जैसे ही मन्त्र पढ़ूंगा, वैसे ही तुम्हारे सरपर एक रुपया आकर गिर पड़ेगा, श्रीगोविन्दाय०......

मुहम्मद—क्या सच?

गोविन्द—अरे इसमें क्या है, अभी आजमाकर देखलो, श्रीगो०...

मुहम्मद—अच्छा लाओ, अपना हाथ।

गोविन्द—यह लो।

मुहम्मद—अच्छा मन्त्र बोलो।

गोविन्द—ज़मीनमें देखो।

मुहम्मद—देख तो रहा हूं।

गोविन्द—अगर जमीनसे जरा भी नजर हटाई, तो सरपर रुपयेके बदले पत्थर गिर जायगा, और सर फूट जायगा।

मुहम्मद—अरे, रुपया तो गिरने दे, मैं कयामत तक ऊपर न देखूंगा।



गोविन्द—अच्छा तो मैं मंत्र पढ़ता हूं,

मुहम्मद—हां, हां, पढ़ो।

गोविन्द—अच्छा, तो यह प्रारंभ किया।

[दूसरे हाथमें रुपया लेकर उसके खोपड़ीके ऊपर हाथ उठाता है।]

इस यवनकी खोपड़ीपर चांदी गिरै धमाधमः।
कष्ट मेरा नष्ट हो, श्रीगोविन्दाय०......

[दूसरे हाथसे रुपया उसके सरपर गिराता है।]

मुहम्मद—हें, हें, हें, अरे यार! यह तो सचमुच रुपया आकर गिर पड़ा। (रुपया हाथमें लेकर) अरे यार यह तो रुपया, है, रुपया।

गोविन्द—रुपया नहीं तो क्या अधेलचा है। श्रीगोविंदाय०......

मुहम्मद—भाई! यह रुपया गिरानेका मन्तर तू मुझे बतादे तो मैं अभी तुझे छोड़ दूं,

गोविन्द—देखो मियां! रुपया तुम जितना कहो उतना दे दूं, मगर मंत्र नहीं बता सकता।

मुहम्मद—क्यों भाई?

गोविन्द—अरे मंत्र तुझे बता दूंगा तो मैं क्या भीख मांगूगा, श्रीगोविंदाय नमो नमः।

मुहम्मद—देख भाई! तू मंतर नहीं बतायेगा, तो गिरफ्तार होकर सीधे फांसीपर चढ़ जायगा। और अगर मन्तर बता देगा तो छूट जायगा।



गोविन्द—तो क्या मन्त्र न बतानेसे मैं मार डाला जाऊंगा, श्रीगोविन्दाय नमो नमः।

मुहम्मद—और नहीं तो क्या ?

गोविन्द—अच्छा, मन्तर बतानेपर मुझे छोड़ दोगे न ?

मुहम्मद—हाँ, हाँ, जरूर छोड़ दूंगा।

गोविन्द—अच्छा, क़सम खाओ।

मुहम्मद—लो मैं पाक परवरदिगारकी क़सम खाता हूं, कि मन्तर बतानेपर तुझे मैं छोड़ दूंगा।

गोविन्द—अच्छा जी ऐसा ही है, तो तुम्हें मन्तर बताये देता हूं। क्योंकि जिन्दगी रहेगी तो हजारो मंत्र सीख लूंगा। और अगर मर जाऊंगा तो क्या मंत्र लेकर चाटूंगा। श्रीगोविन्दाय नमो नमः

मुहम्मद—शावाश! इसीका नाम अक़्लमन्दी है।

गोविन्द—अच्छा सरदारसाहब! अपनी आंखोंपर पट्टी बांधो।

मुहम्मद—क्यों ?

गोविन्द—क्योंकि जबतक पट्टी नहीं बांधोगे तबतक रुपयेवाली देवी सिद्ध नहीं होगी, श्रीगोविन्दाय०......

मुहम्मद—देखो यार! धोखा तो नहीं देते ?

गोविन्द—अरे भाई, धोखा देना होता तो तुझे मैं अपना मंतर बतलाता ?

मुहम्मद—अच्छा तो मैं पट्टी बांधता हूं।

गोविन्द—देखना! पट्टीके भीतर आंख न खुलने पाये नहीं तो पूरे अंधे हो जाओगे।

मुहम्मद—अरे यार! तू कहे तो अपनी आंखे तक फोड़ लूं, मगर मंतर जरा जल्दी सिखला दे।

गोविन्द—अच्छा, भाई जल्दी करो।

मुहम्मद—(पट्टी बाँधकर) लो, भाई, पट्टी तो बांध चुका।

गोविन्द—बस तो अब मैं मंत्र बोलता हूं। तुम उसको दुबारा पढ़ते जाओ।

मुहम्मद—बोलो, बोलो, जल्दी बोलो।

गोविन्द—(मंत्र पढ़ता है।) सोनेका संसार है,।

मुहम्मद—सोनेका संसार है॥

गोविन्द—और चांदीका है, दम दमः।

मुहम्मद—और चाँदीका है, दम दमः॥

गोविन्द—मन्त्र देकर जाता हूं, श्रीगोविन्दाय नमो नमः।

मुहम्मद—मन्त्र देकर जाता हूं, श्रीगोविन्दाय नमो नमः॥

[गोविन्दका प्रस्थान।]

मुहम्मद—अबे, बोलता है, या निकालूं तलवार।

[सिपाहियोंके साथ अब्दुलकरीमका प्रवेश]

अब्दुल—करलो गिरफ्तार।

मुहम्मद—अरे मन्तर बताता है, या गिरफ्तार करता है।

अब्दुल—हैं, यह किसकी आवाज़ ?



मुहम्मद—कौन? अब्दुलकरीम !

अब्दुल—कौन मुहम्मद !

मुहम्मद—जी हां।

अब्दुल—अरे तू यहां और वो कहां, (पट्टी खोलता है।)

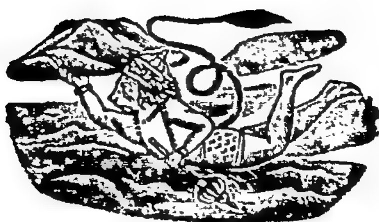
मुहम्मद—भाई अब्दुलकरीम वह तो मुझे धोखा देकरा भाग गया।

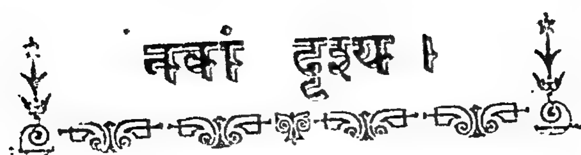
अब्दुल—हाय! हाय!! सब चौपट हो गया। खैर सिपाहियो ! इस लाशको उठा ले जाओ और उस खूनीका पता लगाओ। मैं भी जाता हूं, और उसे तलाश करता हूं।

सिपाही—जो हुक्म।

[एक तरफ अब्दुल, मुहम्मदका जाना, दूसरी तरफ सिपाहियोंका जाना]

[पटाक्षेप]





नवां दृश्य।

स्थान—शयनागार।

["शाइस्ताखां सो रहा है—मोमबत्ती जल रही है"
शिवाजीका हाथमें नंगी तलवार लिये—नकाब
डाले प्रवेश]

शिवाजी—रात काली है, सारे शहरमें सन्नाटा है, मगर मेरा दिल सफेद है। इसमें स्याहीका सिर्फ एक कांटा है, सारी दुनियां सोती है, मगर मैं जागता हूं। क्यों? क्या डाका मारनेके लिये? नहीं, नहीं,। औरङ्गजेबसे, शाइस्ताखाँसे बल्कि सारे दुश्मनोंसे बदला लेनेके लिये। लोग मुझे दग़ाबाज कहेंगे मगर किसके लिये? मेरे कर्तव्यके लिये, मेरे सच्चे कर्मके लिये,। लोग मुझे जालसाज कहेंगे मगर किसके लिये? मेरी सच्ची देश-सेवाके लिये, मेरे सच्चे हिन्दू-धर्मके लिये। क्या दुनियांकी जुबानोंका ख्याल करके इस अत्याचारी राक्षसका कत्ल न करूं? क्या वीरताका धर्म सोचकर देश-द्रोहीके रक्तसे अपना हाथ न भरूं? नहीं, नहीं, भरूंगा और जरूर भरूंगा। जिस पापी शैतानने हमारे हज़ारों बल्कि करोड़ों हिन्दुओंके खूनसे अपना पेट भरा है, मैं उसके खूनसे अपना



हाथ ज़रूर भरूंगा। जिस भयंकर प्रेतने सहस्रों ब्राह्मणोंको कत्ल किया है, मैं उनका कत्ल ज़रूर करूंगा। बस अब नहीं रुक सकता, हाथ बढ़ चुका, दिल कह चुका, पांव चल चुका। (चलकर रुकना) मगर यह सोता है, सोते हुए इन्सानको एक वीर पुरुष नहीं मार सकता। हिन्दू जातिका बहादुर कितना ही जालसाज या धोखेबाज़ हो मगर सोते हुए आदमीकी गर्दन नहीं उतार सकता। अगर मारना है, तो जगाकर, अगर कत्ल करना है तो आरामकी सेज़से उठाकर। लेकिन अपना इन्तजाम कर लेना चाहिये, यानी सिरहाने रखी हुई तलवार अपने पास रख लेनी चाहिये। (सिरहानेकी तलवार उठाकर अपने पास रखता है,) हाँ अब ठीक, और बिल्कुल ठीक, अब इसे खेला-खेलाकर मारूंगा। रुला-रुलाकर इसकी गर्दन उतारूंगा।

(शाइस्ताखांका हाथ पकड़कर) शाइस्ता खां।

शाइस्ता०—(जागकर) क्या हुआ ? क्या हुआ ?

शिवाजी—बुरा हुआ।

शाइस्ता०—कौन है, दगाबाज़ ?

शिवाजी—जानता नहीं ? मेरा नाम है, शिवाजी महाराज।

शाइस्ता०—क्या, क्या, क्या, शि, शि, शिवा, शिवा, शिवा,......

शिवाज़ी—क्यों ? क्यों ? घबड़ा क्यों गया ?



शाइस्त०—ओ नाबकार! क्या तू मुझे गफ़लतसे मारना चाहता था ?

शिवाजी—गफ़लतसे मारना होता तो तू अबतक मर चुका होता।

शाइस्ता—मगर।

शिवाजी—मगर मैं तुझे जगाकर मारने आया हूं।

शाइस्ता—अगर इतनी बहादुरी थी तो मैदानमें तलवार क्यों न चलाई ?

शिवाजी—इसलिये कि वीरोंके साथ दिखलाना चाहिये वीरताई और तेरे जैसे बेइमानोंके साथ करना चाहिये दगा और फरेबकी कार्रवाई।

शाइस्ता—ओ मक्कार! मेरे सामने भी ऐसी गुफ्तार। (सिरहाना देखकर) हैं! तलवार कहां है? तलवार?

शिवाजी—तलवार मेरी म्यानमें है और बहादुरी तेरी जुबानमें है।

शाइस्ता—हः, हः, हः, शिवाजी! तुम हमसे भी चालाक हो इसलिये मैं तुम्हें छोड़ता हूं।

शिवाजी—(व्यङ्गसे) आप मुझे छोड़ते हैं यह आपकी मिहर्बानी है, मगर मैं आपको नहीं छोड़ सकता।

शाइस्ता—इसका सबब?

शिवाजी—इसका सबब यही है, कि तूने हमारी कौमका खून बहाया है।



शाइस्ता—क्या बिला कसूर ?

शिवाजी—हाँ, हां, बिला कसूर।

शाइस्ता—किस तरह ?

शिवाजी—क्या मैंने तुमसे खुद लड़ाई की थी ?

शाइस्ता—नहीं।

शिवाजी—क्या मैंने तेरे मुल्कपर चढ़ाई की थी ?

शाइस्ता—नहीं।

शिवाजी—तो फिर बोल ओ डाकू, चोर, कुत्ते ! तू हमारे मुल्कमें किस लिये आया ? क्या सोचकर तूने हमारे साथ युद्ध मचाया ? जानता नहीं था, कि यह महाराष्ट्रोंका राज है ? मालूम नहीं था, कि यहांका राजा शिवाजी महाराज है ?

उतारा जायगा तेरा ये सर इन हाथोंसे।
मिटाया जायगा यह ज़ोर ज़र इन हाथोंसे॥
तुझे वीरत्वकी होगी खबर इन हाथोंसे।
हमारा जुल्म होगा कारगर इन हाथोंसे॥
तुझीसे आज मैं देहलीका ताज ले लूंगा।
मैं सारे हिन्दुओंका बदला आज ले लूंगा॥

शाइस्ता—शिवाजी ! तुम भूलते हो। मैंने जो कुछ तुम्हारी कौमके साथ ज्यादती की है, वह सिर्फ अपने बादशाह औरङ्गजेबके हुक्मसे, न कि अपने जुलमसे।



जिसे सोचा है तुमने ज़ुल्म वह मेरी न हरकत थी।
किया है, जब्र जो मैंने वो सब शाही हुकूमत थी॥
अगर बहता न हिन्दूका लहू मुझसे तो बेहतर था।
मगर मैं क्या करूं? मुझको तो औरङ्गजेबका डर था॥

शिवाजी—खैर! अगर तूने बादशाह औरङ्गजेबके हुक्मसे हिन्दुओं-पर शस्त्र उठाया था, तो मैं सारी दुनियांके शाहंशाह परमात्मा, परमेश्वरके हुक्मसे तुझपर तलवार उठाता हूं। अगर तूने औरङ्गजेबके डरसे मुझे मिटाया था, तो मैं तुझे परमात्माके डरसे मिटाता हूं।

उठाया था, जो तूने तेग़ औरङ्गजेबके डरसे।
कलेजा काँपता मेरा भी है, साक्षात् ईश्वरसे॥
मुझे भी देश रक्षाके लिये अफसरकी आज्ञा है।
तेरा संहार करनेके लिये, ईश्वरकी आज्ञा है॥

शाइस्ता—शिवाजी! अगर ऐसा है तो मैं जंग बन्द कर देता हूं, और तुमसे सुलह कर लेता हूं, मगर ख़ामखाही मेरा खून बहानेसे तुम्हारे हाथ कुछ न आयेगा। सोचो और समझो! बात रह जायगी और वक्त़ गुज़र जायगा।

तुम्हारी हो अगर मर्ज़ी तो लड़ना बन्दकर दूं मैं।
तुम्हारे सामने ही जंगके हथियार धर दूं मैं॥
नहीं लड़ने की है, ताक़त मुझे मैं पस्त बाजी हूं।
लिखा लो शर्तें मुझसे मैं सुलह करनेको राजी हूं॥



शिवाजी—जा, जा, वेहया! मैं और तुझसे सुलह करूं! वेहतर है, कि तुझसे सुलह करनेके पहले आत्म-हत्या करलूं। सुलहका ज़माना चला गया, तेरा वह जोश और वल चला गया। अब तो तेरी सुलहमें भी तूफ़ान है। तेरे साथ सुलह करनेमें हिन्दू जातिका अपमान है।

सुलह तुझसे जिसकी इस दुनियांमें कम औकात है।
सुलह तुझसे जिससे शैतानोंका दर्जा मात है॥
हम नहीं करते सुलह शेरोंके वच्चे शेर हैं।
सुलह कुत्तोंसे नहीं करते जो सच्चे शेर हैं॥

शाइस्ता—ओ वदज़ात! तू हमें कुत्ता वनाता है? अकेलेमें घेरकर मुझे धमकियां दिखलाता है। अगर वहादुरी थी, तो जंगमें क्यों न आया? वहां क्यों, न मुझे कुत्ता वनाया? आह, मजवूर हूं कि वेअख्तियार हूं, इस वक्त वेहथियार हूं। अगर मेरे हाथमें खंजरका टुकड़ा भी होता तो तेरी वोटी, वोटी, काट-कर गिरा देता।

शिवाजी—ओ मुर्दार! वेवक़ूफीकी शान न वघार! अगर कुछ हिम्मत है, तो ले अपनी तलवार संभाल और सामने आकर दिलका अरमान निकाल। (तलवार फेंक देना)

शाइस्ता—(तलवार उठाकर) देखो! शिवाजी! मैं फिर तुम्हें सुलहके लिये समझाता हूं।



शिवाजी—ओ पापी! हत्यारे!! मै तेरी सुलहको पैरोंकी ठोकरसे ठुकराता हूं।

शाइस्ता—अच्छा, तो आ जा।

[दोनोंका लड़ना, शाइस्ताखांकी तलवार टूट जाना, शाइस्ता-खांका भागना, शिवाजीका पीछा करना, रास्तेमें शाइस्ताखांके लड़केका आकर शिवाजीसे युद्ध करना, शाइस्ताखांका खिड़कीसे कूदकर भागना।]

शिवाजी—आह! भाग गया। नीच! पापी!! खूनी!!! औरतोंकी तरह भाग गया, मगर तू कौन है? जिसने मेरे काममें खलल डाला?

लड़का—मैं शाइस्ताखांका लड़का हूं। मेरे सामने तुमने मेरे बापकी जो तौहीन की है, उसका बदला मैं अपनी तलवारसे लूंगा।

शिवाजी—खैर! शाइस्ताखां न सही तो उसका बेटा ही सही।

[दोनोंका युद्ध करना, शाइस्ताखांके बेटेका गिरना, शिवाजीका उसके कलेजेमें शमशीर भोंकना।]

शिवाजी—आह! आज हिन्दू सन्तानोंके रक्तका केवल एक बूंद रस मिला है। भारतमाता प्रसन्न हो, हिन्दू धर्म खुश हो, आज मैंने अपना कर्तव्य पालन किया है। हिन्दुओंकी

विधवायें, हिन्दुओंकी बेटियां, हिन्दुओंकी मातायें अपने आंसुओंसे नहीं, बल्कि शत्रु-पुत्रके रक्तसे अपनी प्यास बुझाकर अपना हृदय ठंढा करो।

[तलवार निकालकर]

हुआ है, रक्त मय सर्वाङ्ग सुन्दर इस सिरोहीका।
कलेजा चीर डाला आज मैंने देश-द्रोहीका॥

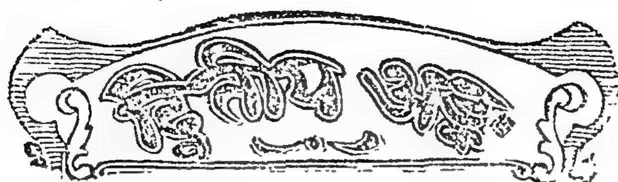
[शिवाजीके सब सरदार आकर शिवाजीको तलवारोंसे छाया करते हैं।]

सब—बोलो महामायाकी जय। वीर शिवाजीकी जय, भारत वर्षकी जय।

टेबला।

ड्राप।





प्रथम दृश्य .

स्थान—पुष्पवाटिका .

[सहेलियोंके साथ प्रभातसुन्दरीका प्रवेश]

गायन ।

सव—प्यारी ! न दिलमें हो उदास सजन आज
आयेंगे ।

प्रभात—प्रीतमके दर्शन विन नैना न चैन पायेंगे ।
॥ प्यारी ! न दिलमें ॥

प्रभात—कैसे हृदयमें धीरज आवे, पिय सन्देश
कौन सुनावे ।

सव—चिन्ता न करो राखो विश्वास, जगतईश
जगतनाथ, सुख समय दिखायेंगे ।



पद्मा०—प्यारी ! तुम इतनी उदास क्यों होती हो ? कुमार आज कलमें आही जायंगे, धैर्य्य धरो।

प्रभात—सखी ! धीरज तो बहुत धरती हूं, मगर क्या करूं ? चित्त नहीं मानता...

छोड़कर प्रीतमको कैसे हृदय घबड़ाये नहीं।
सात दिन भी हो गये, पर वे यहां आये नहीं ॥

केतकी—प्यारी ! हमको तो भरोसा है, कि वे आज यहां अवश्य आजायंगे।

मोहनी—हाँ, हाँ, आयेंगे नहीं तो सन्देशा ही भेजवा देंगे।

ललिता—अरी संदेशा क्या ? वह तो आज आयेंगे, और आवश्य आयेंगे।

पद्मा०—भला तूने कैसे जाना ?

ललिता—अरी ! इसमें जानने की क्या बात है। सुना है, कि कल रातको शिवाजी महाराजने शाइस्ताखांके बेटेको मार डाला और कुमारने कितनी ही यवन-सेनाका संहार कर डाला। अतएव अब उन्हें विजयका उपहार लेनेके लिये प्यारीके पास आना ही पड़ेगा।

सब—हां, हां, ठीक है।]

पद्मा०—तब तो उनकी विजयपर हमें आनन्द मानना चाहिये और मांगलिक गीत गाना चाहिये।

—अवश्य ! अवश्य !!



गोविन्द—अरे यार,मैं तो वेहथियार हूं, लेकिन तुम हथियार वाले होकर मुझसे इतना डरते हो। शेर होकर चूहोंसे खौ़फ खाते हो, श्रीगोविन्दाय०.........

मुहम्मद—अच्छा, भाई अब्दुल तुम जाओ, मैं इसे लेकर वैठा हूं।

अब्दुल—देखो! कहीं छूट न जाय।

मुहम्मद—नहीं जी, कोई खेलवाड़ थोड़े ही है।

अब्दुल—अच्छा, मैं जाता हूं।

(प्रस्थान)

गोविन्द—यारो लोग सच कहते हैं, कि आधीरातको घरसे वाहर निकलना वुरा होता है

मुहम्मद—(स्वगत) अच्छा उल्लू फंसा।

गोविन्द—क्यों भाई सिपाही ?

मुहम्मद—क्या है, वे ?

गोविन्द—अरे यार, जरा सीधेसे वोलो काटे क्यों खाते हो, श्रीगोविन्दाय०............

मुहम्मद—क्या तेरे वापका नौकर हूं, जो सीधेसे वोलूं ?

गोविन्द—अच्छा जनाव, आप कुत्तेकी पूंछकी तरह टेढ़े होकर वोलिये श्रीगोविन्दाय०......

मुहम्मद—चुप चाप वैठ रह।

गोविन्द—अरे मित्र! एक वात तो सुनो।

मुहम्मद—क्या है ?

गोविन्द—देखो, अगर तुम मुझे छोड़ दो, तो मेरे पास एक



ऐसी करामात है, कि जिससे तुम्हें हजारों रुपये मिल सकते हैं।

मुहम्मद—क्यों वे! फिर वही झांसा।

गोविन्द—अरे, झांसा नहीं; मैं सच कहता हूं।

मुहम्मद—मगर मुझे यकीन कैसे हो?

गोविन्द—आजमाइश करलो।

मुहम्मद—अच्छा, तो पहले नमूना दिखाओ।

गोविन्द—अच्छा, तुम मेरा हाथ ज़ोरसे पकड़ लो, जिससे मैं भाग न सकूं, और एक टक निगाहसे जमीनकी तरफ देखो, मैं जैसे ही मन्त्र पढूंगा, वैसे ही तुम्हारे सरपर एक रुपया आकर गिर पड़ेगा, श्रीगोविन्दाय०......

मुहम्मद—क्या सच?

गोविन्द—अरे इसमें क्या है, अभी आजमाकर देखलो, श्रीगो०...

मुहम्मद—अच्छा लाओ, अपना हाथ।

गोविन्द—यह लो।

मुहम्मद—अच्छा मन्त्र बोलो।

गोविन्द—ज़मीनमें देखो।

मुहम्मद—देख तो रहा हूं।

गोविन्द—अगर जमीनसे जरा भी नजर हटाई, तो सरपर रुपयेके बदले पत्थर गिर जायगा, और सर फूट जायगा।

मुहम्मद—अरे, रुपया तो गिरने दे, मैं कयामत तक ऊपर न देखूंगा।

गोविन्द—अच्छा तो मैं मंत्र पढ़ता हूं,

मुहम्मद—हां, हां, पढ़ो।

गोविन्द—अच्छा, तो यह प्रारंभ किया।

[दूसरे हाथमें रुपया लेकर उसके खोपड़ीके ऊपर हाथ उठाता है।]

इस यवनकी खोपड़ीपर चांदी गिरे धमाधमः।
कष्ट मेरा नष्ट हो, श्रीगोबिन्दाय०......

[दूसरे हाथसे रुपया उसके सरपर गिराता है।]

मुहम्मद—हैं, हैं, हैं, अरे यार! यह तो सचमुच रुपया आकर गिर पड़ा। (रुपया हाथमें लेकर) अरे यार यह तो रुपया, है, रुपया।

गोबिन्द—रुपया नहीं तो क्या अधेलचा है। श्रीगोविदाय०......

मुहम्मद—भाई! यह रुपया गिरानेका मन्तर तू मुझे बतादे तो मैं अभी तुझे छोड़ दूं,

गोविन्द—देखो मियां! रुपया तुम जितना कहो उतना दे दूं, मगर मंत्र नहीं बता सकता।

मुहम्मद—क्यों भाई?

गोविन्द—अरे मंत्र तुझे बता दूंगा तो मैं क्या भीख माँगूगा, श्रीगोविदाय नमो नमः।

मुहम्मद—देख भाई! तू मंतर नहीं बतायेगा, तो गिरफ्तार होकर सीधे फाँसीपर चढ़ जायगा। और अगर मन्तर बता देगा तो छूट जायगा।



गोविन्द—तो क्या मन्त्र न बतानेसे मैं मार डाला जाऊंगा, श्रीगोविन्दाय नमो नमः।

मुहम्मद—और नहीं तो क्या ?

गोविन्द—अच्छा, मन्तर बतानेपर मुझे छोड़ दोगे न ?

मुहम्मद—हाँ, हाँ, जरूर छोड़ दूंगा।

गोविन्द—अच्छा, क़सम खाओ।

मुहम्मद—लो मैं पाक परवरदिगारकी क़सम खाता हूं,कि मन्तर बतानेपर तुझे मैं छोड़ दूंगा।

गोविन्द—अच्छा जी ऐसा ही है, तो तुम्हें मन्तर बताये देता हूं। क्योंकि जिन्दगी रहेगी तो हजारो मंत्र सीख लूंगा। और अगर मर जाऊंगा तो क्या मंत्र लेकर चाटूंगा। श्रीगोविन्दाय नमो नमः

मुहम्मद—शावाश! इसीका नाम अक़्लमन्दी है।

गोविन्द—अच्छा सरदारसाहव! अपनी आंखोंपर पट्टी वांधो।

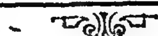
मुहम्मद—क्यों ?

गोविन्द—क्योंकि जवतक पट्टी नहीं वांधोगे तवतक रुपयेवाली देवी सिद्ध नहीं होगी, श्रीगोविन्दाय०......

मुहम्मद—देखो यार! धोखा तो नहीं देते ?

गोविन्द—अरे भाई, धोखा देना होता तो तुझे मैं अपना मंतर वतलाता ?

मुहम्मद—अच्छा तो मैं पट्टी वांधता हूं।



गोविन्द—देखना ! पट्टीके भीतर आंख न खुलने पाये नहीं तो पूरे अंधे हो जाओगे।

मुहम्मद—अरे यार ! तू कहे तो अपनी आंखे तक फोड़ लूं, मगर मंतर जरा जल्दी सिखला दे।

गोविन्द—अच्छा, भाई जल्दी करो।

मुहम्मद—(पट्टी बाँधकर) लो भाई, पट्टी तो बांध चुका।

गोविन्द—बस तो अब मैं मंत्र बोलता हूं। तुम उसको दुबारा पढ़ते जाओ।

मुहम्मद—बोलो, बोलो, जल्दी बोलो।

गोविन्द—(मंत्र पढ़ता है।) सोनेका संसार है, !

मुहम्मद—सोनेका संसार है॥

गोविन्द—और चांदीका है, दम दमः।

मुहम्मद—और चाँदीका है, दम दमः॥

गोविन्द—मन्त्र देकर जाता हूं, श्रीगोविन्दाय नमो नमः।

मुहम्मद—मन्त्र देकर जाता हूं, श्रीगोविन्दाय नमो नमः॥

[गोविन्दका प्रस्थान।]

मुहम्मद—अबे, बोलता है, या निकालूं तलवार।

[सिपाहियोंके साथ अब्दुलकरीमका प्रवेश]

अब्दुल—करलो गिरफ्तार।

मुहम्मद—अरे मन्तर पताता है, या गिरफ्तार करता है।

अब्दुल—हैं, यह किसकी आवाज ?



मुहम्मद—कौन ? अब्दुलकरीम !

अब्दुल—कौन मुहम्मद !

मुहम्मद—जी हां।

अब्दुल—अरे तू यहां और वो कहां, (पट्टी खोलता है।)

मुहम्मद—भाई अब्दुलकरीम वह तो मुझे धोखा देकर भाग गया।

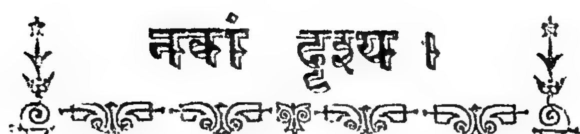
अब्दुल—हाय ! हाय !! सब चौपट हो गया। खैर सिपाहियो ! इस लाशको उठा ले जाओ और उस खूनीका पता लगाओ। मैं भी जाता हूं, और उसे तलाश करता हूं।

सिपाही—जो हुक्म।

[एक तरफ अब्दुल, मुहम्मदका जाना, दूसरी तरफ सिपाहियोंका जाना]

[पटाक्षेप]





नवाँ दृश्य।

स्थान—शयनागार .

["शाइस्ताखां सो रहा है—मोमबत्ती जल रही है"
शिवाजीका हाथमें नंगी तलवार लिये—नकाब
डाले प्रवेश]

शिवाजी—रात काली है, सारे शहरमें सन्नाटा है, मगर मेरा दिल सफेद है। इसमें स्याहीका सिर्फ एक कांटा है, सारी दुनियां सोती है, मगर मैं जागता हूं। क्यों? क्या डाका मारनेके लिये? नहीं, नहीं,। औरङ्गजेबसे, शाइस्ताखाँसे बल्कि सारे दुश्मनोंसे बदला लेनेके लिये। लोग मुझे दग़ावाज कहेंगे मगर किसके लिये? मेरे कर्तव्यके लिये, मेरे सच्चे कर्मके लिये,। लोग मुझे जालसाज कहेंगे मगर किसके लिये! मेरी सच्ची देश-सेवाके लिये, मेरे सच्चे हिन्दू-धर्मके लिये। क्या दुनियांकी जुबानोंका ख्याल करके इस अत्याचारी राक्षसका कत्ल न करूं? क्या वीरताका धर्म सोचकर देश-द्रोहीके रक्तसे अपना हाथ न भरूं? नहीं, नहीं, भरूंगा और जरूर भरूंगा। जिस पापी शैतानने हमारे हज़ारों बल्कि करोड़ों हिन्दुओंके खूनसे अपना पेट भरा है, मैं उसके खूनसे अपना



हाथ ज़रूर भरूंगा। जिस भयंकर प्रेतने सहस्रों ब्राह्मणोंको कत्ल किया है, मैं उनका कत्ल ज़रूर करूंगा। बस अब नहीं रुक सकता, हाथ बढ़ चुका, दिल कह चुका, पांव चल चुका। (चलकर रुकना) मगर यह सोता है, सोते हुए इन्सानको एक वीर पुरुष नहीं मार सकता। हिन्दू जातिका बहादुर कितना ही जालसाज या धोखेबाज़ हो मगर सोते हुए आदमीकी गर्दन नहीं उतार सकता। अगर मारना है, तो जगाकर, अगर कत्ल करना है तो आरामकी सेज़से उठाकर। लेकिन अपना इन्तजाम कर लेना चाहिये, यानी सिरहाने रखी हुई तलवार अपने पास रख लेनी चाहिये। (सिरहानेकी तलवार उठाकर अपने पास रखता है,) हाँ अब ठीक, और बिल्कुल ठीक, अब इसे खेला-खेलाकर मारूंगा। रुला-रुलाकर इसकी गर्दन उतारूंगा।

(शाइस्ताखांका हाथ पकड़कर) शाइस्ता खां।

शाइस्ता०—(जागकर) क्या हुआ ? क्या हुआ ?

शिवाजी—बुरा हुआ।

शाइस्ता०—कौन है, दगाबाज़ ?

शिवाजी—जानता नहीं ? मेरा नाम है, शिवाजी महाराज।

शाइस्ता०—क्या, क्या, क्या, शि, शि, शिवा, शिवा, शिवा,......

शिवाजी—क्यों ? क्यों ? घबड़ा क्यों गया ?



शाइस्त०—ओ नावकार! क्या तू मुझे गफ़लतसे मारना चाहता था ?

शिवाजी—गफ़लतसे मारना होता तो तू अबतक मर चुका होता।

शाइस्ता—मगर।

शिवाजी—मगर मैं तुझे जगाकर मारने आया हूं।

शाइस्ता—अगर इतनी बहादुरी थी तो मैदानमें तलवार क्यों न चलाई ?

शिवाजी—इसलिये कि वीरोंके साथ दिखलाना चाहिये वीरताई और तेरे जैसे बेइमानोंके साथ करना चाहिये दगा और फरेबकी कार्रवाई।

शाइस्ता—ओ मक्कार! मेरे सामने भी ऐसी गुफ्तार। (सिरहाना देखकर) हैं! तलवार कहां है? तलवार?

शिवाजी—तलवार मेरी म्यानमें है और बहादुरी तेरी ज़ुबानमें है।

शाइस्ता—हः, हः, हः, शिवाजी! तुम हमसे भी चालाक हो इसलिये मैं तुम्हें छोड़ता हूं।

शिवाजी—(व्यङ्गसे) आप मुझे छोड़ते हैं यह आपकी मिहर्बानी है, मगर मैं आपको नहीं छोड़ सकता।

शाइस्ता—इसका सबब ?

शिवाजी—इसका सबब यही है, कि तूने हमारी कौमका खून बहाया है।



शाइस्ता—क्या बिला कसूर ?

शिवाजी—हाँ, हां, बिला कसूर।

शाइस्ता—किस तरह ?

शिवाजी—क्या मैंने तुमसे खुद लड़ाई की थी ?

शाइस्ता—नहीं।

शिवाजी—क्या मैंने तेरे मुल्कपर चढ़ाई की थी ?

शाइस्ता—नहीं।

शिवाजी—तो फिर बोल ओ डाकू, चोर, कुत्ते ! तू हमारे मुल्कमें किस लिये आया ? क्या सोचकर तूने हमारे साथ युद्ध मचाया ? जानता नहीं था, कि यह महाराष्ट्रोंका राज है ? मालूम नहीं था, कि यहांका राजा शिवाजी महाराज है ?

उतारा जायगा तेरा ये सर इन हाथोंसे।
मिटाया जायगा यह ज़ोर ज़र इन हाथोंसे॥
तुझे वीरत्वकी होगी खबर इन हाथोंसे।
हमारा ज़ुल्म होगा कारगर इन हाथोंसे॥
तुझीसे आज मैं देहलीका ताज़ ले लूंगा।
मैं सारे हिन्दुओंका बदला आज ले लूंगा॥

शाइस्ता—शिवाजी ! तुम भूलते हो। मैंने जो कुछ तुम्हारी कौमके साथ ज्यादती की है, वह सिर्फ अपने बादशाह औरङ्गजेबके हुकमसे, न कि अपने ज़ुलमसे।

जिसे सोचा है तुमने ज़ुल्म वह मेरी न हरकत थी।
किया है, जब्र जो मैंने वो सब शाही हुकूमत थी॥
अगर बहता न हिन्दूका लहू मुझसे तो बेहतर था।
मगर मैं क्या करूं? मुझको तो औरङ्गजेबका डर था॥

शिवाजी—खैर! अगर तूने बादशाह औरङ्गजेबके हुक्मसे हिन्दुओं-पर शस्त्र उठाया था, तो मैं सारी दुनियांके शाहंशाह परमात्मा, परमेश्वरके हुक्मसे तुझपर तलवार उठाता हूं। अगर तूने औरङ्गजेबके डरसे मुझे मिटाया था, तो मैं तुझे परमात्माके डरसे मिटाता हूं।

उठाया था, जो तूने तेग़ औरङ्गजेबके डरसे।
कलेजा काँपता मेरा भी है, साक्षात् ईश्वरसे॥
मुझे भी देश रक्षाके लिये अफसरकी आज्ञा है।
तेरा संहार करनेके लिये, ईश्वरकी आज्ञा है॥

शाइस्ता - शिवाजी! अगर ऐसा है तो मैं जंग बन्द कर देता हूं, और तुमसे सुलह कर लेता हूं, मगर ख़ामखाही मेरा खून बहानेसे तुम्हारे हाथ कुछ न आयेगा। सोचो और समझो! बात रह जायगी और वक्त गुज़र जायगा।

तुम्हारी हो अगर मर्जी तो लड़ना बन्दकर दूं मैं।
तुम्हारे सामने ही जंगके हथियार धर दूं मैं॥
नहीं लड़ने की है, ताक़त मुझे मैं पस्त बाजी हूं।
लिखा लो शर्त मुझसे मैं सुलह करनेको राजी हूं॥



शिवाजी—जा, जा, वेहया ! मैं और तुझसे सुलह करूं ! वेहतर है, कि तुझसे सुलह करनेके पहले आत्म-हत्या करलूं। सुलहका ज़माना चला गया, तेरा वह जोश और वल चला गया। अव तो तेरी सुलहमें भी तूफ़ान है। तेरे साथ सुलह करनेमें हिन्दू जातिका अपमान है।

सुलह तुझसे जिसकी इस दुनियांमें कम औक़ात है।
सुलह तुझसे जिससे शैतानोंका दर्जा मात है॥
हम नहीं करते सुलह शेरोंके वच्चे शेर हैं।
सुलह कुत्तोंसे नहीं करते जो सच्चे शेर हैं॥

शाइस्ता—ओ वदज़ात ! तू हमें कुत्ता वनाता है ? अकेलेमें घेरकर मुझे धमकियां दिखलाता है। अगर वहादुरी थी, तो जंगमें क्यों न आया ? वहां क्यों, न मुझे कुत्ता वनाया ? आह, मजवूर हूं कि वेअख्तियार हूं, इस वक्त वेहथियार हूं। अगर मेरे हाथमें खंजरका टुकड़ा भी होता तो तेरी वोटी, वोटी, काट-कर गिरा देता।

शिवाजी—ओ मुर्दार ! वेवक़ूफीकी शान न वघार ! अगर कुछ हिम्मत है, तो ले अपनी तलवार संभाल और सामने आकर दिलका अरमान निकाल। (तलवार फेंक देना)

शाइस्ता—(तलवार उठाकर) देखो ! शिवाजी ! मैं फिर तुम्हें सुलहके लिये समझाता हूं।



शिवाजी—ओ पापी ! हत्यारे !! मै तेरी सुलहको पैरोंकी ठोकरसे ठुकराता हूं ।

शाइस्ता—अच्छा, तो आ जा ।

[दोनोंका लड़ना, शाइस्ताखांकी तलवार टूट जाना, शाइस्ताखांका भागना, शिवाजीका पोछा करना, रास्तेमें शाइस्ताखांके लड़केका आकर शिवाजीसे युद्ध करना, शाइस्ताखांका खिड़कीसे कूदकर भागना ।]

शिवाजी—आह ! भाग गया । नीच ! पापी !! खूनी !!! औरतोंकी तरह भाग गया, मगर तू कौन है ? जिसने मेरे काममें खलल डाला ?

लड़का—मैं शाइस्ताखांका लड़का हूं। मेरे सामने तुमने मेरे बापकी जो तौहीन की है, उसका बदला मैं अपनी तलवारसे लूंगा ।

शिवाजी—ख़ैर ! शाइस्ताखां न सही तो उसका बेटा ही सही ।

[दोनोंका युद्ध करना, शाइस्ताखांके बेटेका गिरना, शिवाजीका उसके कलेजेमें शमशीर भोंकना ।]

शिवाजी—आह ! आज हिन्दू सन्तानोंके रक्तका केवल एक बूंद रक्त मिला है । भारतमाता प्रसन्न हो, हिन्दू धर्म खुश हो, आज मैंने अपना कर्तव्य पालन किया है । हिन्दुओंकी



विधवायें, हिन्दुओंकी बेटियां, हिन्दुओंकी मातायें अपने आंसुओंसे नहीं, बल्कि शत्रु-पुत्रके रक्तसे अपनी प्यास बुझाकर अपना हृदय ठंढा करो।

[तलवार निकालकर]

हुआ है, रक्त मय सर्वाङ्ग सुन्दर इस सिरोहीका।
कलेजा चीर डाला आज मैंने देश-द्रोहीका ॥

[शिवाजीके सब सरदार आकर शिवाजीको तलवारोंसे छाया करते हैं।]

सब—बोलो महामायाकी जय। वीर शिवाजीकी जय, भारत वर्षकी जय।

टेवला।

ड्राप।





प्रथम दृश्य .

स्थान—पुष्पवाटिका .

[सहेलियोंके साथ प्रभातसुन्दरीका प्रवेश]

गायन ।

सब—प्यारी ! न दिलमें हो उदास सजन आज आयेंगे ।

प्रभात—प्रीतमके दर्शन विन नैना न चैन पायेंगे ।
॥ प्यारी ! न दिलमें ॥

प्रभात—कैसे हृदयमें धीरज आवे, पिय सन्देश कौन सुनावे ।

सब—चिन्ता न करो राखो विश्वास, जगतईश जगतनाथ, सुख समय दिखायेंगे ।



पद्मा०—प्यारी ! तुम इतनी उदास क्यों होती हो ? कुमार आज कलमें आहो जायंगे, धैर्य्य धरो।

प्रभात—सखी ! धीरज तो वहुत धरती हूं, मगर क्या करूं ? चित्त नहीं मानता...

छोड़कर प्रीतमको कैसे हृदय घबड़ाये नहीं।
सात दिन भी हो गये, पर वे यहां आये नहीं ॥

केतकी—प्यारी ! हमको तो भरोसा है, कि वे आज यहां अवश्य आजायंगे।

मोहनी—हाँ, हाँ, आयेंगे नहीं तो सन्देशा ही भेजवा देंगे।

ललिता—अरी संदेशा क्या ? वह तो आज आयेंगे, और आवश्य आयेंगे।

पद्मा०—भला तूने कैसे जाना ?

ललिता—अरी ! इसमें जानने की क्या वात है। सुना है, कि कल रातको शिवाजी महाराजने शाइस्ताखांके वेटेको मार डाला और कुमारने कितनी ही यवन-सेनाका संहार कर डाला। अतएव अब उन्हें विजयका उपहार लेनेके लिये प्यारीके पास आना ही पड़ेगा।

सब—हां, हां, ठीक है।

पद्मा०—तब तो उनकी विजयपर हमें आनन्द मानना चाहिये और मांगलिक गीत गाना चाहिये।

सब—अवश्य ! अवश्य !!

ऊधोराम—अ र र र र, कन्याको डे, ढाई सौ रुपयेकी कर ली कमाई।
गोविन्द—हां, श्रीगोविन्दाय०''लूं, कहीं एकाध कम तो नहीं है।
ऊधोराम—हे राम! अब क्या नाठन खनाखनकी चमाचमः।
गोविन्द—और सुनों !कर्क, मंगहता है, श्रीगोबिन्दय नमो नमः॥
धर्म रद्दुलका मारवाड़ीके भेषमें आना।)
ऊधोराम—भृष्ट तो नहीं हुई महरा, अगर आज मारवाड़ी न बनता तो
गोविन्द—नहीं, नहीं, भृष्ट तो नहठोंके हाथसे कभी न बचने पाता
राहु केतुके हाथ, हैं ब्दुलकरीमको कोई नहीं पहचानता
ऊधोराम—क्या यह ग्रह भी एक आदमी मुझे मारवाड़ी बनियां
गोविन्द—हां, हां, यही तो ड
ऊधोराम—बड़ा बेढब मामिला न—छः—सात, अरे यार भूल गया
गोविन्द—और सुनो, शनि देव
ऊधोराम—महाराज! शनिश्च न है? अररर यह तो वही बरहमन
चढ़ाता हूं। गोंने गिरफ्तार किया था। और यह
गोविन्द—चढ़ाते हो तो अद धोखा देकर भाग गया था।
याद रखना। ो अठारह गड्डियां गिन डालीं मगर फिर
ऊधोराम—वह क्या? नहीं हुए। श्रीगोविन्दाय०……
गोविन्द—चार दिवसके पास तो इस वक्त बहुत माल हैं, क्या
ऊधोराम—खैर महाद्र? मगर यार इस तरह धींगा-धींगीमें कहीं
सहाय खुल जायगा तो सब मामिला चौपट हो जायगा।
गोविन्द—धत्त रेकी अब सौ मुद्रा पूरी हुई। श्रीगोविन्दाय०…
अब्दुल—हां, हां, यही तरकीब ठीक है, शहर कोतवालके पास



जाऊं और उसके सामने इस पण्डितको अपने रुपयों-
का चोर वनाऊं। वस इसकी गर्दन तो फंस
जायगी, और रुपयोंकी थैली मुझे मिल जायगी।

[अब्दुलका प्रस्थान]

गोविन्द—हाय ! हाय !! यह माया भी कैसी बुरी होती है,
पहले तो इसे कमाना मुश्किल, और कमा लिया तो
सम्हालना मुश्किल, सम्हाल लिया तो गिनना
मुश्किल, और गिन लिया तो छिपाना मुश्किल
श्रीगोविन्दाय०......इतनी देरमें राम राम करके सौ
रुपया गिन पाया, अब आगे और गिनता हूं।
श्रीगोवि०......एक दो तीन पांच अररर भूल गया।
कम्बख्त जब भूलता हूं, तब तीन पर। अच्छा, अब
की तीनको खूब सम्हाल लूंगा। श्रीगोवि०......
एक—दो—तीन—चार—पांच (इसी प्रकार पूरे
रुपये गिन कर) हत्तेरा भला हो, अब ढाई सौ पूरे
हुए। अब वैंकमें चलना चाहिये और रुपये जमा
करना चाहिये।

ढाई सौका व्याज होगा ढाई रुपया सालमः।
मिल गई पूरी रकम श्रीगोविन्दाय०........

[जाना चाहता है, कोतवाल, अब्दुलके साथ आता है]

कोतवाल—ठहरिये महाराज !



गोविन्द—कौन ! जमामार साहब श्रीगोवि०······

कोतवाल—क्यों महाराज ! आपने इस मारवाड़ीका रुपया छीन लिया है ?

गोविन्द—क्या कहा, रुपया ! और मारवाड़ीका ? श्रीगोवि०···

कोतवाल—हां, हां, मारवाड़ीका।

गोविन्द—जमामार साहब ! मारवाड़ीका रुपया तो मैंने देखा ही नहीं, हां अपना रुपया अलबत्ता यहां गिन रहा था।

कोतवाल—क्यों सेठजी ! यह क्या कहता है ?

अब्दुल—कोतवाल साहब ! चोर कहीं अपने मुंहसे कबूलता है।

कोतवाल—देखो, विप्र देवता ! अगर तुम इसके रुपये दे दोगे तो हम तुम्हें छोड़ देंगे। नहीं तो तुम्हें गिरफ्तार करके शिवाजीके पास ले चलेंगे।

गोविन्द—हे भगवान ! इस बनिये ने तो ब्राह्मणपर ही नियत बिगाड़ी। श्रीगोविन्दाय०········

कोतवाल—क्यों महाराज ! क्या विचार है ?

गोविन्द—जमामार साहब ! मुझे शिवाजीके पास चलना स्वीकार है; क्योंकि हिन्दुओंके न्यायका वहीं सच्चा दर्बार है।

अब्दुल—(स्वगत) हाय ! हाय !! यह तो बहुत ही बुरा हुआ शिवाजीके सामने कहीं मेरा भेद खुल जायगा तो गड़बड़ हो जायगा।



कोतवाल— सेठजी! दर्वारमें चलिये, वहीं आपका न्याय हो जायगा।

अब्दुल—कोतवाल साहब! मेरा इन्साफ आप ही कर दीजिये, दर्बारमें जानेसे देर हो जायगी।

कोतवाल—नहीं, महाराजके होते हुए हम इन्साफ नहीं कर सकते।

अब्दुल—अगर ऐसा है तो मैं अपना रुपया छोड़ता हूं और अपने घरका रास्ता लेता हूं।

कोतवाल—क्यों, तुम शिवाजीके पास क्यों नहीं चलते?

अब्दुल—इतना मेरे पास समय नहीं।

कोतवाल—(स्वगत) यह बनियां शिवाजीके पास जानेमें क्यों घबड़ाता है, मुझे इसकी बातोंपर शक आता है।

गोविन्द—जमामार साहब! देखी इस बनियेकी बेईमानी। इसीको कहते हैं, दूधका दूध और पानीका पानी।

कोतवाल—अच्छा सेठजी! तुम अपना जनेऊ हाथमें लेकर कसम खाओ कि ये रुपये हमारे हैं।

अब्दुल—(स्वगत) अररर, अब क्या करूं। (प्रकट) कोतवाल साहब, हमलोग तो जैनी हैं, हमारे यहां जनेऊ नहीं होता है।

गोविन्द—कैसा साफ जवाब देता है। श्रीगोवि०......

कोतवाल—अच्छा तुम्हारे रुपये कितने हैं?

अब्दुल—अन्दाजन ढाई सौ।



गोविन्द—दुष्टको पूरी गिनती याद है श्रीगोवि०……

कोतवाल—तुमने इन रुपयोंको जिस थैलीमें रखा था उसका रङ्ग कैसा था?

अब्दुल—(स्वगत) अररररर, यह तो जानता ही नहीं। (प्रकट) कोतवाल साहब! मैंने थैलीमें रुपये नहीं रखे थे।

कोतवाल—तो फिर कहां रखे थे?

अब्दुल—अपनी पगड़ीमें बांधे थे।

गोविन्द—अरे मूर्ख, इस मारवाड़ी पगड़ीको क्यों कलङ्कित करता है?

कोतवाल—क्या इस पगड़ीके पल्लेमें ढाई सौ रुपये बांधे जा सकते हैं?

अब्दुल—बेशक।

कोतवाल—अच्छा तुम पण्डितजीसे ढाई सौ रुपये लेकर इस पगड़ीमें बांधो।

अब्दुल—अभी लीजिये।

कोतवाल—पण्डितजी! आप अपने रुपये इन्हें दे दीजिये।

गोविन्द—अरे हाय हाय, क्या मेरी मेहनतकी कमाई बनियेंकी पगड़ीमें समा जायगी श्रीगोविन्दाय०……

कोतवाल—मैं अभी रुपये नहीं दिला रहा हूं! बल्कि सच्चे चोरका पता लगा रहा हूं।

गोबिन्द—ऐसा है तो लीजिये। श्रीगोवि०……

[थैली देता है]

कोतवाल—लो सेठजी ! इन रुपयोंको पगड़ीमें बांधकर दिखाओ ।

अब्दुल—जो हुक्म ।

[पगड़ी उतारता है, गोबिन्दराव अब्दुलके सरपर चोटी न देखकर चपत लगाता है, और चिल्लाता है]

गोबिन्द—गवज हो गया, जमामार साहव ! गवज हो गया ।

कोतवाल—क्यों पण्डितजी ? क्या हुआ ?

गोविन्द—अरे, कह दिया कि गवज हो गया, इसके सिरपर चोटी तो है ही नहीं श्रीगोवि०......

[अब्दुल भागना चाहता है]

कोतवाल—खबरदार, पाजी ! यवनोंकी जासूसी करते करते दूसरोंको ठगना भी सीख गया ।

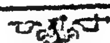
अब्दुल—कोतवाल साहब ! माफ कीजिये ।

कोतवाल—चुप मूर्ख, (सिपाहियोंसे) इसे कैद करलो ।

[सिपाही, बनियेंको पकड़ते हैं]

कोतवाल—पण्डितजी ! इस पापीने तो अपना दण्ड पाया । परन्तु आप कहिये कि यह रुपया आपके पास कहां से आया ?

गोविन्द—(स्वगत:) लीजिये साहब, बनियां छूटा, तो कोतवालने धर दबाया श्रीगोवि०......(प्रकट) जमामार साहब ! यह रुपया तो मुझे दक्षिणामें मिला है ।



कोतवाल – किसने दिया ?

[ऊधोरामका प्रवेश]

ऊधोराम—मैंने दिया।

कोतवाल—क्या तुमने दिया है ?

ऊधोराम—जी हां, जिस कन्याको आप अभी मुसलमानोंके पञ्जेसे छुड़ाकर लाये हैं, उसीके प्रश्न विचारमें मैंने इन्हें यह दक्षिणा दी थी।

गोविन्द—अब तो विश्वास हुआ, श्रीगोवि०……

कोतवाल—विप्र देव ! मुझे क्षमा करना, मैंने अपना कर्तव्य पालन किया है।

गोविन्द—कोई हर्ज नहीं श्रीगोवि०……

कोतवाल—सिपाहियों ! इस जासूसको कारागारमें ले चलो।

[कोतवाल, सिपाही तथा घन्दुलका प्रस्थान]

ऊधोराम—महाराज ! मेरी कन्या मिल गई, और आप चलकर अपनी बाकी दक्षिणा ले लीजिये।

गोविन्द—धन्य है परमात्मा, अभी तो मैं जेलखाने जा रहा था, अभी दक्षिणा मिलने लगी श्रीगोवि०…तेरी लीला भी विचित्र है। चलो भाई चलो, मैं आता हूं।

ऊधोराम—जो आज्ञा। (प्रस्थान)

गोविन्द—ऐसी लक्ष्मीसे तो मेरी नाकमें आया दमः।
पर हृदय रुकता नहीं श्रीगोवि०………

गायन।

रूपचन्दजीकी माया, इस दुनियां बीच निराली है
उसकी कुछ भी शान नहीं जो धन दौलतसे
खाली है॥

दौलतके लिये सुनते हैं सौ सौ बातें।
दौलतके लिये खाते हैं जुती लातें॥
दौलत जिसके पास नहीं वो मूरख और मवाली है
उसकी०—

दौलत ही इस जीवनमें स्वर्ग दिखाती।
दौलत ही भङ्गीको भूपाल बनाती॥
दौलत बिना मनुष्य जगतमें निधन है कङ्गाली है।
उसकी०—

[प्रस्थान]





तृतीय दृश्य ।

स्थान—पहाड़ी जंगल .

[आचार्य्य और कुमारका प्रवेश]

आचार्य्य—कुमार ! मैं फिर कहता हूं, कि बिना सोचे समझे किसी कार्यमें उत्तेजित होना ठीक नहीं ।

कुमार—आचार्य्य ! आप मेरे गुरु हैं, आप मेरे देशसेवा कार्यके सहायक हैं, मैं आपकी आज्ञा उल्लङ्घन नहीं कर सकता । परन्तु क्या करूं, मेरा हृदय नहीं मानता ।

जोश अब ठण्डा पड़ा हिम्मत पै पानी फिर गया ।
आज तक जो ताज सरपर था ज़मीपर गिर गया ॥
क्यों न हम मर जायं अपना आबो दाना देखकर ।
क्यों न दिल फट जाय भारतका ज़माना देखकर ॥

आचार्य्य—कुमार ! तुम्हारा कहना यथार्थ है, परन्तु इसके लिये क्षत्रपति महाराज शिवाजीको दोष देना व्यर्थ है ।

कुमार—आचार्य्य ! मुझे ऐसा विश्वास नहीं था कि एक भारतवर्षका बहादुर और नामी शेर थोड़ेसे लोभमें फंस जायगा । अपनी तलवारका कब्ज़ा छोड़कर दूसरोंसे भीख मांगनेके लिये हाथ फैलायेगा ।



शानपर इस ज़िन्दगी काही गुज़रना ठीक है।
भीख घर घर मांगनेसे डूब मरना ठीक है॥

आचार्य्य—इस समय तुम हृदयके-वेगको उभारनेका उपाय कर रहे हो, वीर शिवाजीके विचारोंपर कलङ्क लगा कर अन्याय कर रहे हो।

कुमार—मैं नहीं समझता कि आप इतना देख सुनकर भी शिवाजीका पक्ष क्यों लेते हैं, जिसने यवनोंसे मिलकर अपना आत्म-समर्पण कर दिया, उसे देश-भक्त या देशोद्धारककी पदवी क्यों देते हैं?

आचार्य्य—इस लिये कि उनके विचार पवित्र और गुप्त महत्वों से भरे हैं। उनके देशोद्धार सम्बन्धी मनोर्थ आजके दिन तक ताजे और हरे हैं।

तुम कहो निर्बल मगर वो आज भी तय्यार है।
जङ्ग लग जाये मगर तलवार फिर तलवार है॥

कुमार—आचार्य्य! आप उनके भाव छिपाकर मुझे शान्त कर रहे हैं, मेरी वीरता और मेरी उत्तेजनाका अन्त कर रहे हैं; परन्तु आज मैं इन शब्दोंका आदर न करूंगा, मैंने अपने बलपर देशोद्धारका कार्य्य उठाया है, उसे पूरा करूंगा। युद्धमें यवनोंको मारूंगा या स्वयं मरूंगा, परन्तु रणक्षेत्रसे हटूंगा नहीं। लडूंगा, और आखिरी दमतक लडूंगा।



बनाऊंगा मैं इज्जत दीन दुखिया और अनाथोंकी।
जमाना देख लेगा वीरताई मेरे हाथोंकी॥

आचार्य्य—कुमार! मेरा कहना न मानोगे तो पछताओगे।
अभी समझते नहीं पीछे धोखा खाओगे।

कुमार—आचार्य्य! मैं वही करूंगा जिसमें तुम अपनी राय समझाओगे, परन्तु गुरुदेव इस समय बातोंका बतण्डा न करो, मेरे हृदयका उबलता हुआ जोश ठण्डा न करो। मैं शिवाजीके कार्यको विचारता नहीं, उनकी इस भीषण भावनाको धिक्कारता नहीं, परन्तु उस दुष्ट राक्षस औरङ्गजेबसे आज क्या आजन्म पर्य्यान्त हारता नहीं।

बनाया है मुझे ईश्वरने भारतके बचानेको।
हुआ है जन्म मेरा देशद्रोहीके मिटानेको॥

आचार्य्य—मैं तुम्हारी वीरतापर प्रसन्न होता हूं, परन्तु तुम्हारी नादानी देखकर दुखित होता हूं, खिन्न होता हूं। तुम तलवारके वीर हो, परन्तु विचारके बहादुर नहीं हो। तुम शेर-दिल हो, मगर शान्ति-सागर नहीं हो, मैं चाहता हूं, कि शत्रुओंका संहार हो मगर शत्रु-वंश मुहताज न हो। पिस्तौलकी गोलियां चलें मगर आवाज न हो।

समर सागरमें कूदो किन्तु थोड़ासा किनारा लो।
विजयकी कामना है तो शिवाजीका सहारा लो॥



कुमार—तो क्या आप यह चाहते हैं, कि मैं भी शिवाजीकी तरह यवनोंसे मिल जाऊं ? और जागीर जवाहिरातका इनाम लेकर खामोश होकर अपने घरमें औरतोंकी तरह चूड़ियां पहनकर बैठ जाऊं ?

आचार्य्य—नहीं कुमार नहीं। भला मैं तुम्हें ऐसा उपदेश दे सकता हूं ?

कुमार—तो फि आप मुझसे क्या कहना चाहते हैं ?

आचार्य्य—मैं यही कहना चहता हूं, कि शिवाजी हमाराज! "दिल्ली-नरेश औरङ्गजेबके यहां कैद हो गये। उन्हें कैदसे छुड़ाओ और दुबारा स्वदेशपर अधिकार जमानेके लिये यवनोंसे संग्राम मचाओ।"

कुमार—क्या, शिवाजी कैद हो गये ?

आचार्य्य—हां कुमार! वह महाराष्ट्र-कुलका प्रतापी सिंह आज तलवारोंके सीकचोंमें घिरा हुआ है। जिस वीर शिवाजीसे औरङ्गजेबका राजभवन थर थर कांपता था वही हिन्दू-कुल-दीपक आज दिल्ली नगरमें क्षीण प्रकाशसे जल रहा है।

कुमार—परन्तु शिवाजीने तो औरङ्गजेबसे संधि कर ली थी, फिर औरङ्गजेबने उन्हें क्यों गिरफ्तार कर लिया ?

आचार्य्य—कुमार ! वह तीव्र बुद्धि महाराज इनलोगोंको धोखा देना चाहता था, परन्तु इन यवनोंने तथा राजा जयसिंहने उन्हें ही धोखा दे दिया।



कुमार—यह रहस्य कुछ समझमें नहीं आता ।

आचार्य्य—इस कहानीको जबतक पूरी न सुनोगे तबतक अच्छी तरह न समझ सकोगे ।

कुमार—यदि ऐसा है, तो हमें पूर्ण रहस्य समझाइये ।

आचार्य्य—जयसिंहकी सेनामें समस्त राजपूत सैनिक थे ।

कुमार—यह तो मैं भी जानता हूं ।

आचार्य्य—अस्तु हिन्दू सन्तानोंका रक्त बहाना शिवाजीने उचित न समझा और उधर दिलेरखांका अत्याचार अधिक होने लगा, गांव लूटे जाने लगे, ग़रीब और अनाथ लोग दुःख पाने लगे, इनकी सेना एक थी, और उनकी सेना दो, अस्तु विजय हो तो कैसे हो ।

कुमार—आह—यही समय संकटका था ।

आचार्य्य—ऐसे वक्त़पर उन्होंने अपनी बुद्धिसे काम लिया उन्होंने सोचा कि अभी तो यवनोंसे संधि कर लूंगा, परन्तु जब जयसिंह यहांसे चला जयगा तो यवनोंसे फिर युद्ध आरम्भ कर दूंगा । थोड़े ही दिनमें दिलेर-खां हार जायगा, और दक्षिण प्रान्त छोड़कर चला जायगा फिर हमारा राज्य इस देशमें स्थापित रह जायगा ।

कुमार—तरकीब तो बहुत अच्छी थी ।

आचार्य्य—मगर कारगर न हुई । संधिकी जब औरङ्गजेबको ख़बर हुई तो उसने इनके लड़केको मनसबदारी अता फर-



माया और इन्हें मिलनेके लिये अपने पास दिल्लीमें बुलाया ।

कुमार—फिर क्या हुआ ?

आचार्य्य—अनर्थ हुआ, बुरा हुआ ।

कुमार—यानी ।

आचार्य्य—यानी यही कि दिल्ली पहुंचने पर औरङ्गजेबने इनसे अपना रुख फेर लिया और एक रोज मौका पाकर इनके निवासस्थानको चार सौ सवारोंसे घेर लिया ।

कुमार—आह ! अफसोस ! हजार अफसोस !!

आचार्य्य—अब अफसोस करनेसे काम न चलेगा । साहसी पुरुष ! अब तुम्हें कुछ कर्त्तव्य करना पड़ेगा ।

कुमार—मैं करूंगा और अवश्य पुरुषार्थ करूंगा ।

आचार्य्य—क्या करोगे ?

कुमार—मैं दिल्ली जाऊंगा ।

आचार्य्य—कब और किस समय ?

कुमार—आज, अभी और इसी समय ।

आचार्य्य—वहां जाकर क्या करोगे ?

कुमार—मैं वहां जाकर कोई युक्ति काममें लाऊंगा, और जिस तरह होगा शिवाजीको छुड़ाकर ले आऊंगा ।

आचार्य्य—कहीं ऐसा न हो, कि शिवाजीको छुड़ाने जाकर तुम स्वयं वहां कैद हो जाओ ।

कुमार—नहीं गुरुदेव ! मैं प्रतिज्ञा करता हूं, कि, यातो शिवा-



जीको कैदसे छुड़ाकर लाऊंगा, और नहीं तो अपने प्राणोंकी वहीं भेंट चढ़ाऊंगा।

आचार्य्य—खैर तुम्हारे प्राणोंपर जब आ पड़ेगी, तो हमारी भी धूनी वहीं रमेगी। परन्तु अपनी तरफसे तुम कोई लड़कपन न करना। वीरताकी अपेक्षा बुद्धि-बलसे काम अधिक लेना।

कुमार—मैं ऐसा ही करूंगा गुरुदेव।

आचार्य्य—अच्छा तो अब विलम्ब न करो।

कुमार—जो आज्ञा! मुझे आशीर्वाद दीजिये कि, मैं अपना कार्य्य कर सकूं।

आचार्य्य—परमात्मा तुम्हारी रक्षा करे।

कुमार—प्रणाम गुरुदेव।

आचार्य्य—आशीर्वाद राजकुमार।

[कुमारका सिर झुकाकर प्रणाम करना और आचार्य्यका आशीर्वाद देना।]

[पटाक्षेप]





चतुर्थ दृश्य.

स्थान—दिल्ली शहरका फाटक.

[चार सर्दार पहरा दे रहे हैं।]

सि० १ ला०—भाई अब्दुल खां!. शिवाजी तो बहुत बुरा फंसा।

२ रा मु०—अरे यार! यह शख्स तो मुसलमानोंका जानी दुश्मन है।

३ रा—भाई, शिवाजी मुसलमान कौमका दुश्मन नहीं, बल्कि बेइन्साफीका दुश्मन है।

४ सि० रा—इसमें कोई शक नहीं कि शिवाजी जो कुछ करते हैं वो अपनी ब्राति और देश रक्षाके लिये, न कि किसी खास कौमकी हत्याके लिये।

१ सि० मु०—क्यों नहीं भाई! तुम तो आखिर हिन्दू हो न फिर हिन्दुओंकी तरफदारी क्यों न करोगे?

२ रा मु०—हां भाई! राजपूतों और मरहठोंका मिजाज एकसा होता है।

सि० ३ रा—नहीं भाई! हम हिन्दू होनेसे शिवाजीकी बड़ाई नहीं करते मगर उनकी बहादुरी और हिम्मतकी तारीफ किये बगैर नहीं रह सकते।

सि० ४—यही तो अफसोस है, कि हम राजपूतोंने अपना धन



धर्म सभी त्यागकर मुसलमानोंको जानो दिलसे मदद दी; मगर फिर भी बेमुरौवत: मुसलमानोंने हमको अपना दुश्मन ही समझा।

सि० १—अरे वाह भाई निहालसिंह! क्या तुम हमारी बातोंसे नाराज़ हो गये?

सि० ४—भाई नाराज़ होनेकी कोई बात नहीं है, हम हिन्दुओंकी तक़दीर ही ऐसी है।

सि० २—आखिर क्या हुआ जो आपने इस क़दर दिलमें रंज पैदा कर लिया,

सि० ४—भाई, ऐसी बातोंसे रंज नहीं तो क्या खुशी पैदा होती है? हमने तो शिवाजीकी तारीफमें सच्ची बात कही, मगर आपलोगोंने हमको हिन्दुओंका तरफदार बताया।

सि० ३—खाँ साहब! आप यह बतलाइये कि अगर हम हिन्दू हीके नातेसे शिवाजीकी तारीफ़ करते हैं, तो क्या बुराई करते हैं? क्या आपलोग अपने बादशाहकी तारीफ़ नहीं करते?

ला सि०—करते क्यों नहीं।

धा सि०—तो बस! जिस तरह मुसलमान जातिको अपनी जातिका बादशाह औरङ्गजेब प्यारा है। उसी तरह हिन्दुओंको छत्रपति महाराज शिवाजी प्यारा है।



१ ला०—भाई महीपतिसिंह ! औरङ्गजेब और शिवाजीका दर्जा तुमने एक कैसे कर दिया ? शिवाजी एक पहाड़ी डाकू है, और औरङ्गजेब बदशाह है।

४ था—बस खां साहब ! सम्हलकर बात कीजिये। औरगङ्गजेब सिर्फ मुसलमानोंका बादशाह है, मगर दूसरी कौममें उसका मामूली रुतबा है, लेकिन शिवाजी वह बहादुर शख्स है, कि जिसके नामका डंका आज भारतवर्षके घर घरमें बज रहा है, सच पूछो तो औरङ्गजेब दगा, और फरेबसे बादशाह बना है मगर शिवाजी अपने मुल्कमें बे ताज़ और तख्त्का पेशवा है

२ रा०—महीपतिसिंह ! मुझे आज मालूम हुआ, कि तुम मौजूदा बादशाहके खिलाफ हो।

१ ला०—ठाकुर साहब ! अगर ऐसा ही इरादा था तो हिन्दुस्तानके तमाम राजपूतोंने हमारी तलवारके नीचे क्यों अपनी गर्दन झुकाई ?

३ रा०—राजपूतोंने तुम्हारी तलवारके नीचे गर्दन नहीं झुकाई बल्कि भाइयोंकी शत्रुताइ, दोस्तोंकी बेहयाई और आपसकी लड़ाईने राजपूतोंकी गर्दन कटवाई।

४:था—बेशक ! एक दिन इस हिन्दुस्तानका वो भी था, कि जब बड़ेसे बड़े मुल्क इसके सामने सर झुकाते थे, बड़े बड़े बहादुर शेर नर बादशाह हमलोगोंकी बहादुरी देखकर दांतों तले अंगुलियां दबाते थे।

२ रा०—मगर आज?

३ रा०—आज तुम महाराजा हो और हम मुहताज हैं, तुम ताजधारी हो हम ताराज हैं।

१ ला०—भला ठाकुर साहब! यह किस लिये?

३ रा०—जमानेकी हरकत और तकदीरकी रङ्गत जाहिर करनेके लिये।

२ रा०—खैरजी योंहीं सही। अगर जमाना और तकदीरने तुम्हारी हालत खराब है तो यह भी हमारा एकवाल समझना चाहिये। क्योंकि जिस कौमका एकवाल बुलन्द हो जाता है तो दुनियांका हर एक बेहतरीन नकशा उसके खिदमतमें आ जाता है।

४ था०—खां साहब! फिर आपने तीखी तान छोड़ी, मगर जिस कौमको आप बेअकबाल समझते हैं वह बेसरो सामान बिना राजताजके भी महाराज हैं। अगर समयके फेरसे कितना ही बुड्ढा क्यों न हो गया हो मगर गज-राज फिर गजराज है।

१ ला०—ठीक है जनाब! रस्सी जल जाय मगर ऐंठन न जाय क्यों, ठीक है न?

३ रा०—हां, हां, ठीक है और बिल्कुल ठीक है। हिन्दू वीरोंकी ऐंठन न आजतक गई है, न जायगी, बल्कि वह दिन भी अब शीघ्र आने वाला है कि जब हिन्दुओंकी तल-

चार मैदाने जङ्गमें अपना जौहर दिखायेगी और अभिमानियोंका सर झुकायेगी।

२ रा०—खैर! हम भी देखेंगे, कि कैसी तलवार चलती है। आखिरमें फतह किसे मिलती है?

३ रा०—अच्छा खां साहब! अब हमारा समय हो गया, बारह बज चुका, अब दूसरे पहरेदारोंको बुलाइये और हमें इजाजत फरमाइये।

१ ला०—ठाकुर साहब! दूसरे पहरेदार आते ही होंगे, थोड़ी देर आप और ठहर जाइये।

[कुमारका प्रवेश]

कुमार—यही है, भारतवर्षके प्रधान राजसिंहासन दिल्ली नगरका मुख्य द्वार यही है। मगर पहरा बहुत कड़ा है, खैर जो भी हो, क्या मुझे इनका भय पड़ा है? नगरके भीतर तो मुझे जाना अवश्य है, अस्तु कष्टसे, दुःखसे लड़कर, झगड़कर, किसी तरह शीघ्र नगरमें प्रवेश करना चाहिये (बढ़कर) क्यों साहब, नगरका रास्ता यही है?

१ ला०—तुम कौन हो?

कुमार—मैं विदेशी हूं।

२ रा०—यहां किस लिये आये हो।

कुमार—अपनी तकदीर आजमाने।

१ ला०—भला कोई हुनर भी है, या खामखाह तकदीरपर उछलते हो ?

कुमार—मेरे पास हुनर हो या न हो, आपको इससे क्या गरज है ? आप मुझे भीतर जाने दीजिये, अगर तकदीर सीधी है, तो मैं बहुत जल्द अपने हुनरमें कामयाब हूंगा।

१ ला०—तुमको भीतर जाना है तो बारह बज चुका है, चार घण्टे यहां ठहरो, चार बजे दर्वाजा खुलेगा उस वक्त भीतर जाना और अपना हुनर दिखाना।

कुमार—मैं चार बजेतक ठहर नहीं सकता क्योंकि मेरा काम जरूरी है।

२ रा०—मैं इस वक्त दर्वाजा नहीं खोल सकता मजबूरी है।

कुमार—देखो, मैं फिर कहता हूं, कि दर्वाजा खोल दो मुझे परेशान मत करो।

१ ला०—भाई! तुम यहांसे चले जाओ, हमारे काममें नुकसान न पहुंचाओ।

३ रा०—खां साहब! अगर इस शख्सका काम जरूरी है, तो जाने दीजिये इसमें आपका क्या हर्ज है ?

२ रा०—क्योंजी ? लगे न हिन्दूका पक्षपात करने, जानते नहीं कि इस वक्त हमारा क्या फर्ज है ?

३ रा०—जान मुहम्मद! तुम हर वक्त मुझे हिन्दुओंके पक्षका ताना देते हो, यह अच्छा नहीं।



१ ला०—अगर हिन्दुओंकी तरफदारी नहीं तो घूसखोरी ही सही।

४ था०—चुप कमीने! राजपूतोंको घूसखोर बनाता है, हम-
लोग शान्त होते हैं और तू उभड़ा जाता है, चल तलवार
निकाल और मुझसे युद्ध कर।

कुमार—(तलवार निकालकर) हां, हां, इसीके साथ मेरा भी
देख ले हुनर।

२ रा०—खां साहव! यह तो कोई मरहठा है।

१ ला०—तब तो जरूर शिवाजीका जासूस होगा।

२ रा०—फिर देखते क्या हो, उठाओ तलवार और उड़ादो सर।

३ रा०—ओ पाजी! ठहर पहले मुझसे बात कर।

(युद्ध होना, खां साहबका मरना, जानमुहम्मदका
शोर मचाना, मुसलमानी फौजका आना,
घोर युद्ध होना, राजपूतोंका मर जाना,
कुमारका कैद हो जाना।)

कुमार—(स्वगत) आह! बना बनाया काम बिगड़ गया।
मेरी आशाओंका बाग एक दमभरमें उजड़ गया,
इसमें किसीका वश क्या है, होता है, वही जो भाग्यमें
लिखा है।

बनानेसे नहीं बनती, जो कुछ हरकत बिगड़ती है।
जमाना शत्रु बन जाता है, जब किस्मत बिगड़ती है॥

ला०—क्यों सिपाही साहब! आखिर हो गये न कैद,

पहले ही कहा था, कि चले जाओ दर्वाजा न खोलवाओ, मगर आपने नहीं माना, अब आरामसे बड़े घरमें मुकाम कीजिये। आजसे आप हैं, और कैद खाना।

कुमार—ओ दुष्ट! आपदामें वीर पुरुष घबड़ाते नहीं, कैदखानेके भयसे मुरझाते नहीं।

बना हूं, धर्मका कैदी नहीं लज्जा मुझे आती।
मुझे थी शर्म तब जब तेग कुछ जौहर न दिखलाती॥
डराते हो मुझे तुम कैदसे, कैदी जमाना है।
हमारे वास्ते सोनेका मंदिर कैदखाना है॥

१ ला०—चलो चलो देखा जायगा, सोनेका मंदिर कैदखाना है।

[सिपाहीलोग कुमारको पकड़कर ले जाते हैं।]

पटाक्षेप।



पांचवां दृश्य .

स्थान—रास्ता—आचार्य्यका प्रवेश

आचार्य्य—आज अचानक मेरा वांयां अङ्ग फड़क रहा है, हृदयमें शोक-सागर अपनी तरंगे मारता है, मालूम नहीं कि इसका कारण क्या है ?

हृदयके भावोंमें वेकली है, वही वनायेगी रंग क्या क्या ।
खवर नहीं मेरे दिलकी धड़कन मुझे दिखायेगी रंग क्या क्या ॥

[प्रतापरावका प्रवेश]

प्रताप—आचार्य्यको प्रणाम ।

आचार्य्य—कौन ? प्रतापराव ! तुम यहां और महाराज कहाँ हैं ?

प्रताप—महाराज तो दिल्लीमें ही हैं ।

आचार्य्य—क्या छूट गये ?

प्रताप—जी नहीं अभी छूटे नहीं ।

आचार्य्य—तो फिर ऐसे समयमें तुमने महाराजको क्यों छोड़ दिया ?

प्रताप—हम क्या करें, आचार्य्य ! महाराजने हमें जवंदस्ती यहां भेज दिया ।

आचार्य्य—उन्होंने जो कुछ स्वमीका धर्म था, उसे पूरा किया, परन्तु तुमलोगोंने उनका साथ छोड़कर पूरी काय-रताका परिचय दिया । क्या ऐसे समयमें जब कि

शत्रु सेनाने उन्हें अपनी तलवारका निशाना कर लिया तो तुम्हें महाराजको छोड़कर चला आना चाहिये ? वीर हो, तो तुम्हें शर्मके समुन्दरमें डूब जाना चाहिये ।

न आई शर्म उन्हें छोड़कर चले आये ?
ज़रासी जिन्दगीको मौतसे बचा लाये ?
शिवाको छोड़कर वीरत्व कर्म छोड़ दिया ।
तुम्हें धिक्कार है, अपना स्वधर्म छोड़ दिया ॥

प्रताप—आचार्य्य ! आप हमारी पूर्ण कथा सुनलें तब हमें कुछ कहें, क्योंकि हमलोग इस कार्य्यमें बेकसूर हैं। निर्दोष हैं ।

आचार्य्य—खैर ! मैं तुम्हारे यहां आनेका कारण जानना चाहता हूं ।

प्रताप—आचार्य्य ! महाराज जिस दिनसे कैद हुए, उसी दिनसे हमलोग शोक-सागरमें डूब गये, मगर महाराज दिन पर दिन एक नई तरकीब सोचते थे, और हमलोगोंसे एकान्तमें सोची हुई तरकीबको कहते थे ।

आचार्य्य—अच्छा फिर ।

प्रताप—अन्तमें महाराजने एक नया उपाय निकाला और उसीके द्वारा अपने मुक्त होनेका विचार निश्चय कर डाला ।

आचार्य्य—क्या वह उपाय तुम्हें मालूम है ?

प्रताप—हां आचार्य्य ! वह उपाय हमें मालूम है ।

आचार्य्य—क्या हमें सुनाओगे ?



प्रताप—यहां नहीं, आश्रममें चलकर।

आचार्य्य—खैर फिर क्या हुआ?

प्रताप—फिर हमलोगोंसे महाराजने कहा कि तुमलोग शीघ्र यहांसे प्रस्थान करो और कुमार जगदीशको समाचार सुनाकर युद्धका सामान करो। मैं शीघ्र आऊंगा, और अपने देशपर अधिकार जमाऊंगा।

आचार्य्य—आह! शिवाजीको क्या मालूम कि कुमार यहां नहीं है।

प्रताप—महाराज? कुमार यहां नहीं तो कहाँ गये?

आचार्य्य—कुमार तो दिल्ली गये।

प्रताप—क्यों?

आचार्य्य—शिवाजीको मुक्त करनेके लिये।

प्रताप—मगर कहीं वह स्वयं विपत्तिमें न फंस जायं?

आचार्य्य—यही तो मुझे भी शंका है। इसी लिये मैंने गुप्त-चरको दिल्ली भेजा है।

प्रताप—हे भगवान! कुशल करो।

[गुप्तचरका प्रवेश]

गुप्तचर—आचार्य्य! सर्वनाश हो गया!

आचार्य्य—क्या हुआ गुप्तचर?

गुप्तचर—आचार्य्य! जगदीशकुमारसिंह शत्रुओंके हाथमें फंस गये और औरङ्गजेबके कैदी हो गये।

आचार्य्य—घोर अनर्थ हुआ।

सिंहनाद नाटक



प्रताप—अब क्या करना चाहिये ?

आचार्य्य—ऐसे समयमें केवल परमात्मासे प्रर्थना करनी चाहिये।

प्रताप—परन्तु केवल प्रार्थनासे क्या होगा ? आखिर कुछ उद्योग भी तो करना होगा।

आचार्य्य—उद्योग तो यथा साध्य करूंगा ही फिर आगे भगवान सहायक है।

प्रताप—क्या हमलोग भी आपका उद्योग सुन सकते हैं ?

आचार्य्य—पूरा उद्योग तो यहां मैं नहीं बता सकता, परन्तु इतना कह देता हूं, कि मैं यहांके प्रसिद्ध ज्योतिषी गोविन्दरावको अपने साथ लेकर जाऊंगा और जिस प्रकार होगा जगदीशकुमारसिंहको कारागारसे छुड़ाऊंगा।

प्रताप—तो हमारे लिये क्या आज्ञा है ?

आचार्य्य—तुम इस समय आश्रममें जाकर विश्राम करो और कल प्रातःकालसे अपनी सेनाकी भर्ती प्रारम्भ कर दो। जब कोई नई खबर आयेगी तो तुम्हें सूचना दे दी जायगी।

प्रताप—जो आज्ञा ! (प्रस्थान)

आचार्य्य—गुप्तचर !

गुप्तचर—महाराज !



आचार्य्य—तुम इसी समय गोविन्दराव ज्योतिषीके पास जाओ और उन्हें मेरे पास शीघ्र बुला लाओ।

गुप्तचर—जो आज्ञा। (प्रस्थान)

आचार्य्य—समयका प्रभाव कितना प्रबल है चारों ओर आपदा और सङ्कटका काला बादल है, इसके बीचमें शिवाका वीर दल है, परन्तु क्या ये विघ्नोंके पहाड़ हमारे कर्त्तव्य-पथमें बाधा डाल सकते हैं? क्या हमारी कामनाओंको हमारे हृदयसे निकाल सकते हैं। कभी नहीं, मरनेपर भी नहीं। प्रह्लादके सामने हिरण्यकश्यपका सिर नीचा हुआ था। वसुदेव और देवकीके सामने राजा कंसका मान भङ्ग हुआ था। उसी तरह हमारा भी भाग्य चमकेगा। हमारा ज्योतिष भी जगमगायेगा, हमारी गई हुई हुकूमत फिर हमारे पास आयेगी।

अटल रहे कर्त्तव्य मार्गपर जिसकी आत्मा।
प्रबल शक्तिसे उसे साथ देता परमात्मा॥
अमर नामके योग्य वही प्रणवीर कहाता।
समय सदा शुभ देश कार्यमें जिसका जाता॥
जो गैरोंका साथ दे, ईश्वर उसके साथ हैं।
देशोद्धारक जो बने, विजय उसीके हाथ है॥

गोविन्द—(प्रवेश करके) श्रीगोविन्दा०……

आचार्य्य—ज्योतिषीजी नमस्कार।

गोविन्द—नमस्कार सरकार। श्रीगोवि०......

आचार्य्य—कहिये इस समय क्या कर रहे थे?

गोविन्द—महाराज! गीताका दूसरा अध्याय समाप्त करके महाभारतका आदि पर्व प्रारम्भ किया था श्रीगोवि०...

आचार्य्य—तो क्या पूजामें कुछ विघ्न पड़ गया?

गोविन्द—जी नहीं, जैसे ही ग्रन्थ हाथमें उठाया, कि आपके गुप्तचरने जाकर आपका समाचार सुनाया। बस फिर क्या था, पूजा-पाठ छोड़, सरपर पांव रखकर यहां चला आया श्रीगोवि०......

आचार्य्य—चलिये अच्छा हुआ जो आप शीघ्र आ गये नहीं तो मुझे स्वयं आपके पास जाना पड़ता।

गोविन्द—क्यों महाराज? क्या कोई नया कार्य आ पड़ा?

आचार्य्य—कार्य कैसा, आपको भी मेरे साथ चलना होगा।

गोविन्द—कहां?

आचार्य्य—दिल्ली।

गोविन्द—अररर, ऐसा किस लिये?

आचार्य्य—कुमारको छुड़ानेके लिये।

गोविन्द—हैं, क्या कुमार बन्दी हो गये श्रीगोवि०......

आचार्य्य—हां उन्हें शत्रुओंने पकड़ लिया और हमारा सारा परिश्रम व्यर्थ कर दिया।

गोविन्द—चलिये साहब ज्योतिष शास्त्रपर तो पत्थर पड़ गया

आचार्य्य—ऐसा क्यों?



गोविन्द—महाराज ! मैंने प्रभातसुन्दरीसे कहा था, कि तुम्हारा कुमारके साथ विवाह होगा, परन्तु यहाँ तो बीचहीमें गड़बड़ घोटाला हो गया । श्रीगो०......

आचार्य्य—ज्योतिषीजी ! आपका ज्योतिष-शास्त्र झूठा नहीं हो सकता, अस्तु निश्चय है, कि कुमार कैदसे छूटकर आयेंगे और प्रभातसुन्दरीको अवश्य अपनी स्त्री बनायेंगे ।

गोविन्द—तब तो ज्योतिषीजी माला माल होजायेंगे । श्री०...

आचार्य्य—अच्छा तो अब आप हमारे साथ चलिये ।

गोविन्द—महाराज ! इतनी जल्दी काहे की, जरा मुझे घर तो हो आने दीजिये ।

आचार्य्य—ज्योतिषीजी ! इस समय मुझे एक एक पल एक एक युगके समान बीत रहा है ।

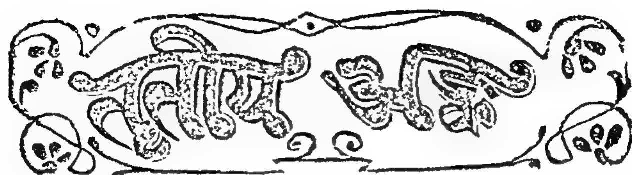
गोविन्द—अच्छा तो मैं घर होकर अभी आता हूं, श्रीगो०......

आचार्य्य—घरमें तुम्हें कुछ आवश्यक कार्य करना है ?

गोविन्द—नहीं, आवश्यक कार्य्य तो कुछ नहीं, केवल बैंकमें थोड़ा रुपया जमा है, उसीका हिसाब करना है । श्रीगोवि०........

आचार्य्य—अरे भाई ! इस समय रुपयेको छोड़ो और अपना कर्तव्य देखो, जीवन रहेगा तो कितने रुपये मिल जायंगे ।

गोविन्द—आचार्य्य ! आप तो कुमारके गुरु ठहरे, आपको





स्थान—प्रभातसुन्दरीका महल।

(सहेलियोंका प्रवेश)

मोहनी—सखी पद्मा! प्रभातकी दशा तो दिन प्रति दिन सोचनीय होती जाती है। न खाना है, न पीना है, न दिनको दिल वहलता है, न रातको नींद आती है, यदि कुछ दिन यही हालत रही तो कुमारी उन्मादिनी हो जांयगी।

पद्मा०—क्या करूं सखी! मैं तो उन्हें शान्त करनेका बहुत उपाय करती हूं, परन्तु वह शान्त होती ही नहीं।

केतकी—सखी! कुमार भी तो बहुत निर्दयी हैं, न कुछ सोचा न विचारा, विना जाने बूझे दिल्ली चले गये। क्या ऐसा करना उन्हें उचित था?

ललिता—अरी! तुम सबको तो अपनी-अपनी पड़ी है, परन्तु कुमारकी शक्ति तो देशोद्धारमें कमर कसकर खड़ी है।



अस्तु एक वीर पुरुष क्या प्रेमकी आराधना कर अपने वीरत्वको त्याग सकता है ?

पद्मा०—यही सोचकर तो मैं चुप हो जाती हूं, नहीं तो प्रभातका विवाह कबका हो गया होता।

मोहनी—खैर ! कुछ भी हो परन्तु इस समय तो कुमारीको शान्त करना ही हमलोगोंका मुख्य कर्तव्य है।

केतकी—कुमारीको तो वही शान्त कर सकता है, कि जिसने कुमारीको कुमारकी प्रेमिनी बनाया है।

ललिता—तो क्या तुम सब पद्मावतीको ही प्रेमका कारण समझती हो ?

मोहनी—बेशक ! हमारी समझमें तो इस प्रेम अभिनयकी प्रधान नटी यही है।

पद्मा०—सखियों ! इसमें कोई सन्देह नहीं, कि यह दुःखमय प्रेम मेरे ही द्वारा अङ्कुरित हुआ है। परन्तु तुम्हीं कहो, कि क्या कोई जान बूझकर भी विषका वृक्ष स्थापित करता है ?

केतकी—यह तो सत्य है, किन्तु जब विषवृक्ष स्थापित हो गया और फल भी निकलने लगे, तो उसका नाश करना सज्जनोंका कर्तव्य है।

पद्मा०—अच्छा, तो तुम्हीं बताओ कि मैं इसका क्या उपाय करूं ?

ललिता—उपाय क्या करोगी, कुमारको ढूंढ़कर यहां ले आओ और प्रभातके साथ उनका विवाह कराओ।

पद्मा०—कुमारको लानेके लिये तो मैं तैयार हूं, परन्तु उनका कुछ पता भी तो हो।

मोहनी—पता क्यों नहीं, यह तो सब जानते हैं कि वह दिल्ली गये हैं।

केतकी—बस फिर क्या है, तुम सीधे दिल्ली चली जाओ और कुमारको लिवा लाओ।

पद्मा०—क्यों नहीं, क्यों नहीं, जिस प्रकार मुंहसे कह दिया उसी प्रकार यदि कार्य्य करना पड़े तो मालूम हो।

ललिता—भला इसमें क्या आपत्ति है, क्या उनको यहां तक बुलानेमें भी कुछ विपत्ति है?

पद्मा०—क्यों, आपत्ति क्यों नहीं है? मान लो कि मैं वहां गई और वहां शत्रुओंके भयानक कारागारमें वह कहीं बन्द कर दिये गये हों, तो मुझे उनका क्या पता लगेगा? और अभाग्यवश कहीं किसी दुष्टने मुझे पहचान लिया तो बेमौत मरना पड़ेगा।

ललिता—अरी वाहरी डरने वाली! क्या शत्रुओंसे इतना डरती है? यदि तेरे ऐसी बड़ी उमर वाली मैं होती तो कुमारको एक पलमें लिवा लाती।

पद्मा०—सखी ललिता! मैं डरना तो जानती ही नहीं, परन्तु अकेली अबलाका शत्रु-नगरमें जाना मूर्खता है, बुद्धिमानी नहीं।

मोहनी—देखो, कुमारी भी इधर ही आती है।



केतकी—आह ! दिनपर दिन मुखकी कान्ति मुरझायी जाती है।

[प्रभातका प्रवेश]

प्रभात—आह ! संसारमें चन्द्रमा और सूर्यका प्रकाश नहीं । प्राणी मात्रमें प्रेमका विकाश नहीं, निर्मल पृथ्वी नहीं निर्मल आकाश नहीं । क्या इसी दुनियांको लोग स्वर्ग कहते हैं ? क्या यही मायाका प्रभाव है,जिसमें लोग फंसे रहते हैं ? यदि यह सत्य है, तो अवश्य मनुष्य मात्रकी भूल है। जिस वृक्षके फल खानेकी आशा सबको है, वह वास्तव में प्रतिभा हीन है, निर्मूल है।

देखा प्रेम प्रवाह, पूर्ण गतिसे, पाया न उसका पता।
हा, हा; काम कठोर की कुमतिसे मैं तो हुई आहता ॥
आभा हीन समस्त सृष्टि ममता मायामयी चित्र है।
ऐसे स्वार्थ समुद्र रूप जगमें कोई नहीं मित्र है ॥

पद्मा०—कुमारी ! शरीर कैसा है ?

प्रभात—जैसा शरीर प्रायः विरही जनोंका होना चाहिये,वैसा ही शरीर मेरा भी है।

पद्मा०—परन्तु अधिक चिन्ता करनेसे आन्तरिक व्यथा बलवती हो रही है। अस्तु शान्तिसे सङ्कटका समय काटना ही बुद्धिमानोंका कर्तव्य है।

प्रभात—पद्मावती ! क्या सचमुच मैं ज्ञान-शून्य हो गयी हूं ? क्या स्मरण-शक्ति सर्वथा जाती रही ?

पद्मा०—प्यारी ! ऐसा हुआ तो नहीं है,पर होनेकी सम्भावना है।



प्रभात—नहीं, नहीं, तुम भूलती हो। क्या तुम्हें याद नहीं, कि युद्धके समय उन्हें मैंने ही उत्साहित किया था, फिर भला मैं उनके लिये क्यों दुःख करने लगी?

पद्मा०—प्रभात! जिस समय तुमने कुमारको युद्धमें जानेकी आज्ञा दी थी, उस समय तुम्हारे हृदयमें जातीय तथा देशीय प्रेम विद्यमान था, परन्तु इस समय तुम्हारे हृदयमें विरहकी ज्वाला तथा प्रेमकी प्रतिमा विराजमान है। फिर भला वह समय और यह समय कैसे बराबर हो सकता है?

प्रभात—नहीं, नहीं, ऐसा कदापि नहीं हो सकता। मैं अपने प्राण त्याग दूंगी, जीवनकी आशा उजाड़ दूंगी, स्वयं संसारसे हट जाऊंगी; परन्तु कुमारको उनके कर्त्तव्यसे न हटाऊंगी।

जो है शरीरधारी वह एक दिन मरेगा।
विकराल कालका गृह स्वीकारना पड़ेगा॥
अतएव जान देकर भी शर्मको न छोड़ें।
ये प्राण छूट जायें पर धर्मको न छोड़ें॥

[दासीका प्रवेश]

दासी—कुमारीजी! महलमें आचार्य्य पधारते हैं।

पद्मा०—अहा! क्या आचार्य्य आये हैं?

दासी—जी हां।

प्रभात—अच्छा उन्हें शीघ्र लिवा लाओ।



दासी—जो आज्ञा। (प्रस्थान)

पद्मा०—इसमें संदेह नहीं कि आचार्य्य अवश्य कुमारका कुछ संदेशा लाये होंगे।

प्रभात—हाँ, विश्वास तो मुझे भी ऐसा ही है, किन्तु व्याकुलता बढ़ती ही जाती है।

[आचार्य्यका प्रवेश]

सब—आचार्य्यको प्रणाम!

आचार्य्य—आशीर्वाद! पुत्री पद्मावती! आज मैं तुम्हारे पास कुछ सन्देशा लाया हूं।

पद्मा०—कहिये, कहिये, महाराज! शीघ्र कहिये, क्योंकि हमारी प्रभात व्याकुल हो रही है।

आचार्य्य—परन्तु मुझे शोक है, कि कुमारका समाचार सुन-कर प्रभातको प्रसन्न न कर सकूंगा।

प्रभात—गुरुदेव! मेरा चित्त और भी व्याकुल हो रहा है।

आचार्य्य—कुमारी! व्याकुल होनेकी कोई आवश्यकता नहीं है, क्योंकि विधाताकी लेखनीको कौन मिटा सकता है। जो उसकी इच्छा होती है, वह कार्य्य अवश्य होता है!

प्रभात—आचार्य्य! क्या कुमार रण-स्थलमें आहत हुए?

आचार्य्य—नहीं, आहत नहीं हुए परन्तु औरङ्गजेबके यहां वन्दी अवश्य हो गये हैं।

प्रभात—हा परमेश्वर!



आचार्य्य—और सुना जाता है कि थोड़े ही दिनोंके अन्दर उन्हें फांसी होने वाली है।

प्रभात—गुरुदेव! कुमारको फांसी!!

आचार्य्य—समाचार तो ऐसा ही मिला है।

प्रभात—बस हो चुका। प्यारी सखी पद्मा! अब मेरा जीवन समाप्त हो चुका।

आस जो बाकी रही थी आज वह भी हो चुकी।
हाय मैं हाथोंसे अपने प्राणपतिको खो चुकी॥
अब मुझे संसारकी शोभा निरखना है वृथा।
प्राणके स्वामी नहीं, तो प्राण रखना है वृथा॥

[बेहोश होकर गिरना, सखियोंका संभालना]

पद्मा०—आचार्य्य! यदि कुमार कारागारसे मुक्त न होंगे, तो महा अनर्थ हो जायगा।

आचार्य्य—पद्मावती! मैं अभी गोविन्दराव ज्योतिषीको लेकर दिल्ली जाता हूं और कुमारका पता लगाता हूं, परमात्माने चाहा तो बहुत शीघ्र कुमारको लेकर आऊंगा।

पद्मा०—ज्योतिषीजी कहां हैं?

आचार्य—द्वारपर खड़े हैं।

पद्मा०—(स्वगत) उनसे बुलाकर कुछ पूछूं।

आचार्य्य—इस समय हमलोगोंको न रोको नहीं तो सब परिश्रम व्यर्थ हो जायगा।



पद्मा०—अच्छा तो आप पधारिये ।

आचार्य्य—हां मैं जाता हूं ।

सब—आचार्य्य को प्रणाम ।

आचार्य्य—आशीर्वाद । (प्रस्थान)

प्रभात—(होशमें आकर स्वगत) प्राणेश्वर ! क्या अब मुझसे न मिलोगे? क्या त्याग दिया ? सर्वदाके लिये त्याग दिया ? अच्छा जैसी तुम्हारी इच्छा । परन्तु याद रक्खो, तुम त्याग दो मगर मैं तुम्हें नहीं त्याग सकती ।

ये अबला प्रेमके बन्धनमें तुमको स्वयं जकड़ेगी ।
ये दासी स्वर्गमें आकर तुम्हारा हाथ पकड़ेगी ॥

पद्मा०—स्वर्गमें नहीं, तुम संसारमें ही उनका हाथ पकड़ोगी ।

प्रभात—पद्मावती ! क्या अब भी उनके आनेकी आशा है ?

पद्मा०—है और अवश्य है । चाँदनीको चन्द्रकी आशा न रहे, नदियोंको समुद्रकी आशा न रहे, पृथ्वीको सृष्टि-समूहकी आशा न रहे, परन्तु प्रभात सुन्दरीको कुमार-की आशा है, और अवश्य है ।

प्रभात—किसके आधार पर ?

पद्मा०—मेरे आधारपर ।

प्रभात—प्यारी सखी ! क्या तेरे आधार पर ? क्या तू कुमार को ला सकती है ?

पद्मा०—अवश्य ला सकती हूं, जब मैंने तुम्हारे विवाहका प्रण किया है, तो कुमारको भी लानेमें मैं समर्थ हूं ।



प्रभात—क्या तुझे अपने कार्य्य पर विश्वास है ?

पद्मा०—हां, हां, मुझे पूर्ण विश्वास है, मैं जाती हूं और कुमार को छुड़ाकर लाती हूं।

हृदयमें शान्तिको धारण करो मैं शीघ्र जाती हूं।
विधर्मी देशमें अपना महत्कौशल दिखाती हूं॥
प्रतिज्ञा है मेरी उस वीरको मैं साथ लाऊंगी।
अगर लाई न उसको तो न अपना मुंह दिखाऊंगी॥

[पद्माका प्रस्थान प्रभातका गाना]

गायन।

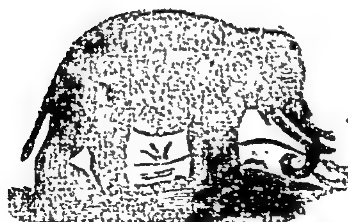
हे वृजके बसैया, कृष्ण कन्हैया,
दुखियोंपर उपकार करो।
इस दुख सागरसे मुझ अबलाकी,
नाव नवैया पार करो॥
यदि तुम नटवर गिरधारी हो,
मनमोहन हो बनवारी हो।
यदि दीनोके दुखहारी हो,
मेरे दुखका संहार करो॥



दुष्टोंने देशको आ घेरा,
विकराल समयका है फेरा।
आरत जनकी इस दीन दशापर,
दीनानाथ विचार करो ॥
है 'विन्दु' यही विनती मेरी,
हे करुणामय न करो देरी।
आधार हमारे नन्ददुलारे,
भारतका उद्धार करो ॥

[प्रभातका सखियों समेत प्रस्थान]

पटाक्षेप]





दूसरा दृश्य ।

स्थान—देहलीका मार्ग.

[आचार्य्य और गोविन्दरावका प्रवेश]

आचार्य्य—ज्योतिषीजी !

गोविन्द—श्रीगोवि०.........

आचार्य्य—देहली नगरमें तो आ गये, परन्तु कुमारका अनु-सन्धान कैसे लगायें ?

गोविन्द—महाराज ! किसी पहरेदारसे पता पूछ लीजिये । श्रीगोवि०......

आचार्य्य—वाह, वाह, जान-बूझकर मूर्ख बनते हो ।

गोविन्द—क्यों महाराज ! मूर्ख बननेकी क्या बात है । श्रीगो०

आचार्य्य—अरे भाई ! अगर किसी पहरेदारसे कुमारका पता पूछेंगे तो वह हमको सीधे स्वर्ग पहुंचायेगा या नहीं ?

गोविन्द—ओ, हो, हो, यह तो ठीक है । श्रीगोवि०......

आचार्य्य—मैं तो एक विचार करता हूं ।

गोविन्द—भला वह क्या ? श्रीगोवि०......

आचार्य्य—वह यही है कि तुम अपनी ज्योतिष गणना द्वारा कुमारका पता लगाओ ।



गोविन्द—(स्वगत) लीजिये,बिल्लीकी दौड़ चूहे तक। श्रीगोवि०…

आचार्य्य—क्यों? क्या सोचते हो?

गोविन्द—जी! मैं यही सोचता हूं, कि ज्योतिषसे कुमारका पूरा पता तो लगे..। नहीं, केवल दिशा और स्थान-का ज्ञान हो जायगा। फिर भला इतने पतेसे हम-को क्या लाभ होगा? श्रीगोवि०……

आचार्य्य—अरे भाई! इतने पतेसे तो आकाश पाताल एक हो सकता है। तुम पुस्तक निकालकर देखो तो सही।

गोविन्द—हाय, हाय, यह पागल बूढ़ा तो मेरे पीछे ही पड़ गया। खैर जी! अब तो पुस्तक खोलनी ही पड़ेगी और कुछ न कुछ झूठ सच्च बोलना ही पड़ेगा। श्रीगोवि०……

आचार्य्य—ज्योतिषीजी! अब विलम्ब करनेका समय नहीं है, शीघ्र गणितका हिसाब लगाओ, और कुमारका पता बताओ।

गोविन्द—बहुत अच्छा महाराज! पुस्तक खोलता हूं। श्रीगो०…

[पुस्तकका खोलना]

रवि बुध भौमः सन्मुखे सर्व कालं।
शनि धन हर्ता प्रष्ट स्वामी करालं॥
यमुन नदी नाम् सर्वदा स्वच्छ धारः।
सशुभस्थाने वसति क्षत्रीकुमारः श्रीगोवि०



आचार्य्य—वाह, वाह, ज्योतिषीजी! तुमने तो वहुत अच्छा श्लोक निकाला।

गोविन्द—जी हां महाराज! यह है सारे ज्योतिषका गर्म मसाला। (स्वगत) अरे श्लोक कैसा यहां तो जो मनमें आया, गढ़ डाला। श्रीगोवि०......

आचार्य्य—परन्तु इसमें अशुद्धियाँ अनेक रह गयी हैं।

गोविन्द—अररर इतना अच्छा श्लोक वनाकर दिया तो भी इस वुड्ढेने अशुद्धी निकाल ही दी, इसी लिये तो हमने अपने काव्यकी समालोचना करानी ही वन्द कर दी है।

आचार्य्य—हां तो ज्योतिषीजी! एक बार पुनः अपना श्लोक पढ़िये तो उसीके अनुसार हमलोग प्रस्थान करें।

गोविन्द—(स्वगत)उंहूं,एकवार श्लोक पढ़ा तो श्लोक अशुद्ध वता दिया, अबकी श्लोक पढ़ूंगा तो ज्योतिष शास्त्र ही झूठा कर देगा। श्रीगोवि०......

आचार्य्य—क्यों भाई! मौन क्यों साध गये?

गोविन्द—महाराज! श्लोक पढ़नेकी क्या आवश्यकता है, मैं भाषामें ही उसका सारांश पुनः कहे देता हूं।

आचार्य्य—नहीं, नहीं, श्लोक तो तुम्हें कहना ही पड़ेगा साथ ही साथ श्लोकका भावार्थ भी करना पड़ेगा।

गोविन्द—धत्तेरेकी इस बूढ़े वन-विलावने मेरी नाकड़ा ही छेद दी।



आचार्य्य—बोलो, बोलो, शीघ्र बोलो।

गोविन्द—बोलता हूं महाराज! अभी बोलता हूं, श्रीगोवि०...
सुनिये महाराज।

आचार्य्य—कहो।

गोविन्द—रवि बुध भौमः सन्मुखे सर्ग कालं। अर्थात् सूर्य्य, चन्द्रमा, और बुध, ये तीनों, महाराज सब समय सन्मुख रहें। श्रीगोवि०......

आचार्य्य—धन्य है, धन्य है।

गोविन्द—और सुनिये महाराज।

आचार्य्य—कहो, कहो।

गोविन्द—शनि धन हर्ता प्रष्ट स्वामी करालं। अर्थात् धनके हरण करने हारे कराल रूप जो शनिश्चरदेवजी हैं, सो महाराज प्रष्ट स्वामी कहते पीठपर सवार रहैं। श्रीगोवि०......

आचार्य्य—सत्यमेव, सत्यमेव।

गोविन्द—और सुनिये महाराज।

आचार्य्य—हां और क्या है भाई?

गोविन्द—यमुन नदीनां सर्वदा स्वच्छ धारः। अर्थात् सर्वदा स्वच्छ धारा है, जिसकी ऐसी जो जमुना नदी है। श्रीगोवि०......
सशुभस्थाने वसति क्षत्रीकुमारः। अर्थात् उसी शुभ स्थानमें श्रीराजकुमार निवास करते हैं। श्रीगोवि०...



आचार्य्य—तो ज्योतिषीजी ! क्या कुमारका कारागार जमुना जीके भीतर है ?

गोविन्द—जी नहीं महाराज ! कारागार तो बाहर यमुना-तट पर है। श्रीगोवि०......

आचार्य्य—तो आपके श्लोकमें यमुना नदी है, तट तो आया ही नहीं ।

गोविन्द—अररर महाराज ! काव्य करनेमें जरा भूल हो गई। श्रीगोवि०........

आचार्य्य—धन्य हो, कवीश्वरजी ! आप ही जैसे कवियोंने तो काव्य महोदधिको अबतक स्थायी रक्खा है।

गोविन्द—और क्या महाराज ! यदि हमलोग न होते तो यह काव्य महोदधि केवल प्रयागराजका गन्दा नाला ही रह जाता। श्रीगोवि०......

आचार्य्य—अच्छा तो अब यहांसे चलकर कुमारके कारागारका पता लगाना चाहिये।

गोविन्द—हां, हां, अब तो बहुत शीघ्र पता लग जायगा। श्रीगो०

आचार्य्य—परन्तु एक बात और भी है।

गोविन्द—वह क्या ?

आचार्य्य—यहांसे आगे बढ़नेके लिये अपना भेष बदलना होगा नहीं तो शत्रु पहचान लेंगे।

गोविन्द—लो भाई ! इस साठ वर्षके बूढ़ेको भी जासूसी करने-का शौक लगा है। श्रीगोवि०...



आचार्य्य—अच्छा आओ हमलोग इस झाड़में छिपकर अपना भेष बदलें।

गोविन्द—हां, हां, बदल लीजिये अभी तो शुभ मुहूर्त है। पीछे भरणी भद्रा लग जायगी।

आचार्य्य—आओ, मेरे साथ आओ।

गोविन्द—चलिये बूढ़े बाबा चलिये श्रीगोवि०··· (प्रस्थान)

[पद्माका मर्दाने वेषमें प्रवेश]

पद्मा०—बहुत प्रयत्न किया कि आचार्य और ज्योतिषीजीसे रास्तेमें मुलाकात हो जाय, परन्तु ऐसा न हुआ, अस्तु अब क्या करना चाहिये ? पहले तो इतने बड़े नगरमें आचार्य्यका मिलना ही मुश्किल है, फिर यदि मिल भी गये तो कुमारका मिलना असम्भव है। हे परमात्मा! चारों ओर आपत्ति ही आपत्ति दिखलायी पड़ती है।

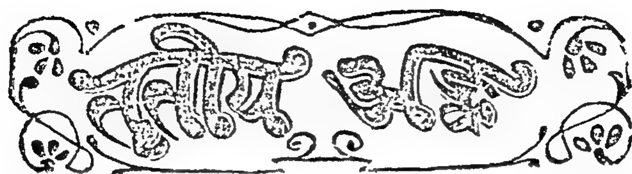
[नेपथ्यमें आचार्य्य और गोविन्द]

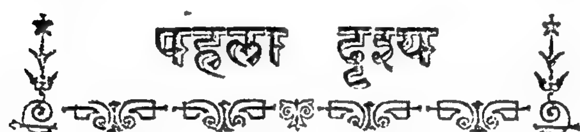
गोविन्द—बूढ़े बाबा! यह टोपी तो मैं नहीं पहनूंगा।

आचार्य्य—अरे भाई! टोपी नहीं पहनोगे तो सब मामिला अधूरा ही रह जायगा।

गोविन्द—अरे हाय, हाय, क्या मैं ज्योतिषी ब्राह्मण होकर तुर्की टोपी पहनूंगा ? श्रीगोवि०······

आचार्य्य—अरे भाई! हल्ला मत मचाओ, नहीं तो शत्रु देख लेंगे, और बुरा हो जायगा।





स्थान—प्रभातसुन्दरीका महल।

(सहेलियोंका प्रवेश)

मोहनी—सखी पद्मा ! प्रभातकी दशा तो दिन प्रति दिन सोच-नीय होती जाती है। न खाना है, न पीना है, न दिनको दिल बहलता है, न रातको नींद आती है, यदि कुछ दिन यही हालत रही तो कुमारी उन्मादिनी हो जाँयगी।

पद्मा०—क्या करूं सखी ! मैं तो उन्हें शान्त करनेका बहुत उपाय करती हूं, परन्तु वह शान्त होती ही नहीं।

केतकी—सखी ! कुमार भी तो बहुत निर्दयी हैं, न कुछ सोचा न विचारा, बिना जाने बूझे दिल्ली चले गये। क्या ऐसा करना उन्हें उचित था ?

ललिता—अरी ! तुम सबको तो अपनी-अपनी पड़ी है, परन्तु कुमारकी शक्ति तो देशोद्धारमें कमर कसकर खड़ी है।



अस्तु एक वीर पुरुष क्या प्रेमकी आराधना कर अपने वीरत्वको त्याग सकता है ?

पद्मा०—यही सोचकर तो मैं चुप हो जाती हूं, नहीं तो प्रभातका विवाह कबका हो गया होता।

मोहनी—खैर! कुछ भी हो परन्तु इस समय तो कुमारीको शान्त करना ही हमलोगोंका मुख्य कर्तव्य है।

केतकी—कुमारीको तो वही शान्त कर सकता है, कि जिसने कुमारीको कुमारकी प्रेमिनी बनाया है।

ललिता—तो क्या तुम सब पद्मावतीको ही प्रेमका कारण समझती हो ?

मोहनी—बेशक! हमारी समझमें तो इस प्रेम अभिनयकी प्रधान नटी यही है।

पद्मा०—सखियों! इसमें कोई सन्देह नहीं, कि यह दुःखमय प्रेम मेरे ही द्वारा अङ्कुरित हुआ है। परन्तु तुम्हीं कहो,कि क्या कोई जान बूझकर भी विषका वृक्ष स्थापित करता है ?

केतकी—यह तो सत्य है, किन्तु जब विषवृक्ष स्थापित हो गया और फल भी निकलने लगे, तो उसका नाश करना सज्जनोंका कर्तव्य है।

पद्मा०—अच्छा,तो तुम्हीं बताओ कि मैं इसका क्या उपाय करूं ?

ललिता—उपाय क्या करोगी, कुमारको ढूंढ़कर यहां ले आओ और प्रभातके साथ उनका विवाह कराओ।



पद्मा०—कुमारको लानेके लिये तो मैं तैयार हूं, परन्तु उनका कुछ पता भी तो हो।

मोहनी—पता क्यों नहीं, यह तो सब जानते हैं कि वह दिल्ली गये हैं।

केतकी—बस फिर क्या है, तुम सीधे दिल्ली चली जाओ और कुमारको लिवा लाओ।

पद्मा०—क्यों नहीं, क्यों नहीं, जिस प्रकार मुंहसे कह दिया उसी प्रकार यदि कार्य्य करना पड़े तो मालूम हो।

ललिता—भला इसमें क्या आपत्ति है, क्या उनको यहां तक बुलानेमें भी कुछ विपत्ति है?

पद्मा०—क्यों, आपत्ति क्यों नहीं है? मान लो कि मैं वहां गई और वहां शत्रुओंके भयानक कारागारमें वह कहीं बन्द कर दिये गये हों, तो मुझे उनका क्या पता लगेगा? और अभाग्यवश कहीं किसी दुष्टने मुझे पहचान लिया तो बेमौत मरना पड़ेगा।

ललिता—अरी वाहरी डरने वाली! क्या शत्रुओंसे इतना डरती है? यदि तेरे ऐसी बड़ी उमर वाली मैं होती तो कुमारको एक पलमें लिवा लाती।

पद्मा०—सखी ललिता! मैं डरना तो जानती ही नहीं, परन्तु अकेली अबलाका शत्रु-नगरमें जाना मूर्खता है, बुद्धिमानी नहीं।

मोहनी—देखो, कुमारी भी इधर ही आती है।



अस्तु एक वीर पुरुष क्या प्रेमकी आराधना कर अपने वीरत्वको त्याग सकता है ?

पद्मा०—यही सोचकर तो मैं चुप हो जाती हूं, नहीं तो प्रभातका विवाह कबका हो गया होता।

मोहनी—खैर! कुछ भी हो परन्तु इस समय तो कुमारीको शान्त करना ही हमलोगोंका मुख्य कर्तव्य है।

केतकी—कुमारीको तो वही शान्त कर सकता है, कि जिसने कुमारीको कुमारकी प्रेमिनी बनाया है।

ललिता—तो क्या तुम सब पद्मावतीको ही प्रेमका कारण समझती हो ?

मोहनी—बेशक! हमारी समझमें तो इस प्रेम अभिनयकी प्रधान नटी यही है।

पद्मा०—सखियों! इसमें कोई सन्देह नहीं, कि यह दुःखमय प्रेम मेरे ही द्वारा अङ्कुरित हुआ है। परन्तु तुम्हीं कहो, कि क्या कोई जान बूझकर भी विषका वृक्ष स्थापित करता है ?

केतकी—यह तो सत्य है, किन्तु जब विषवृक्ष स्थापित हो गया और फल भी निकलने लगे, तो उसका नाश करना सज्जनोंका कर्तव्य है।

पद्मा०—अच्छा, तो तुम्हीं बताओ कि मैं इसका क्या उपाय करूं ?

ललिता—उपाय क्या करोगी, कुमारको ढूंढ़कर यहां ले आओ और प्रभातके साथ उनका विवाह कराओ।

पद्मा०—कुमारको लानेके लिये तो मैं तैयार हूं, परन्तु उनका कुछ पता भी तो हो।

मोहनी—पता क्यों नहीं, यह तो सब जानते हैं कि वह दिल्ली गये हैं।

केतकी—बस फिर क्या है, तुम सीधे दिल्ली चली जाओ और कुमारको लिवा लाओ।

पद्मा०—क्यों नहीं, क्यों नहीं, जिस प्रकार मुंहसे कह दिया उसी प्रकार यदि कार्य्य करना पड़े तो मालूम हो।

ललिता—भला इसमें क्या आपत्ति है, क्या उनको यहां तक बुलानेमें भी कुछ विपत्ति है?

पद्मा०—क्यों, आपत्ति क्यों नहीं है? मान लो कि मैं वहां गई और वहां शत्रुओंके भयानक कारागारमें वह कहीं बन्द कर दिये गये हों, तो मुझे उनका क्या पता लगेगा? और अभाग्यवश कहीं किसी दुष्टने मुझे पहचान लिया तो बेमौत मरना पड़ेगा।

ललिता—अरी वाहरी डरने वाली! क्या शत्रुओंसे इतना डरती है? यदि तेरे ऐसी बड़ी उमर वाली मैं होती तो कुमारको एक पलमें लिवा लाती।

पद्मा०—सखी ललिता! मैं डरना तो जानती ही नहीं, परन्तु अकेली अबलाका शत्रु-नगरमें जाना मूर्खता है, बुद्धिमानी नहीं।

मोहनी—देखो, कुमारी भी इधर ही आती है।



केतकी—आह! दिनपर दिन मुखकी कान्ति मुरझायी जाती है।

[प्रभातका प्रवेश]

प्रभात—आह! संसारमें चन्द्रमा और सूर्यका प्रकाश नहीं। प्राणी मात्रमें प्रेमका विकाश नहीं, निर्मल पृथ्वी नहीं निर्मल आकाश नहीं। क्या इसी दुनियांको लोग स्वर्ग कहते हैं? क्या यही मायाका प्रभाव है,जिसमें लोग फंसे रहते हैं? यदि यह सत्य है, तो अवश्य मनुष्य मात्रकी भूल है। जिस वृक्षके फल खानेकी आशा सबको है, वह वास्तव में प्रतिभा हीन है, निर्मूल है।

देखा प्रेम प्रवाह, पूर्ण गतिसे, पाया न उसका पता।
हा, हा; काम कठोर की कुमतिसे मैं तो हुई आहता॥
आभा हीन समस्त सृष्टि ममता मायामयी चित्र है।
ऐसे स्वार्थ समुद्र रूप जगमें कोई नहीं मित्र है॥

पद्मा०—कुमारी! शरीर कैसा है?

प्रभात—जैसा शरीर प्रायः विरही जनोंका होना चाहिये,वैसा ही शरीर मेरा भी है।

पद्मा०—परन्तु अधिक चिन्ता करनेसे आन्तरिक व्यथा बलवती हो रही है। अस्तु शान्तिसे सङ्कटका समय काटना ही बुद्धिमानोंका कर्तव्य है।

प्रभात—पद्मावती! क्या सचमुच! मैं ज्ञान-शून्य हो गयी हूं? क्या स्मरण-शक्ति सर्वथा जाती रही?

पद्मा०—प्यारी! ऐसा हुआ तो नहीं है,पर होनेकी सम्भावना है।



प्रभात—नहीं, नहीं, तुम भूलती हो। क्या तुम्हें याद नहीं, कि युद्धके समय उन्हें मैंने ही उत्साहित किया था, फिर भला मैं उनके लिये क्यों दुःख करने लगी?

पद्मा०—प्रभात! जिस समय तुमने कुमारको युद्धमें जानेकी आज्ञा दी थी, उस समय तुम्हारे हृदयमें जातीय तथा देशीय प्रेम विद्यमान था, परन्तु इस समय तुम्हारे हृदयमें विरहकी ज्वाला तथा प्रेमकी प्रतिमा विराजमान है। फिर भला वह समय और यह समय कैसे बराबर हो सकता है?

प्रभात—नहीं, नहीं, ऐसा कदापि नहीं हो सकता। मैं अपने प्राण त्याग दूंगी, जीवनकी आशा उजाड़ दूंगी, स्वयं संसारसे हट जाऊंगी; परन्तु कुमारको उनके कर्तव्यसे न हटाऊंगी।

जो है शरीरधारी वह एक दिन मरेगा।
विकराल कालका गृह स्वीकारना पड़ेगा॥
अतएव जान देकर भी शर्मको न छोड़ें।
ये प्राण छूट जायें पर धर्मको न छोड़ें॥

[दासीका प्रवेश]

दासी—कुमारीजी! महलमें आचार्य्य पधारते हैं।

पद्मा०—अहा! क्या आचार्य्य आये हैं?

दासी—जी हां।

प्रभात—अच्छा उन्हें शीघ्र लिवा लाओ।



दासी—जो आज्ञा।   (प्रस्थान)

पद्मा०—इसमें संदेह नहीं कि आचार्य्य अवश्य कुमारका कुछ संदेशा लाये होंगे।

प्रभात—हाँ, विश्वास तो मुझे भी ऐसा ही है, किन्तु व्याकुलता बढ़ती ही जाती है।

[आचार्य्यका प्रवेश]

सब—आचार्य्यको प्रणाम!

आचार्य्य—आशीर्वाद! पुत्री पद्मावती! आज मैं तुम्हारे पास कुछ सन्देशा लाया हूं।

पद्मा०—कहिये, कहिये, महाराज! शीघ्र कहिये, क्योंकि हमारी प्रभात व्याकुल हो रही है।

आचार्य्य—परन्तु मुझे शोक है, कि कुमारका समाचार सुनकर प्रभातको प्रसन्न न कर सकूंगा।

प्रभात—गुरुदेव! मेरा चित्त और भी व्याकुल हो रहा है।

आचार्य्य—कुमारी! व्याकुल होनेकी कोई आवश्यकता नहीं है, क्योंकि विधाताकी लेखनीको कौन मिटा सकता है। जो उसकी इच्छा होती है, वह कार्य्य अवश्य होता है?

प्रभात—आचार्य्य! क्या कुमार रण-स्थलमें आहत हुए?

आचार्य्य—नहीं, आहत नहीं हुए परन्तु औरङ्गजेबके यहां वन्दी अवश्य हो गये हैं।

—हा परमेश्वर!



आचार्य्य—और सुना जाता है कि थोड़े ही दिनोंके अन्दर उन्हें फांसी होने वाली है।

प्रभात—गुरुदेव! कुमारको फांसी!!

आचार्य्य—समाचार तो ऐसा ही मिला है।

प्रभात—बस हो चुका। प्यारी सखी पद्मा! अब मेरा जीवन समाप्त हो चुका।

आस जो बाकी रही थी आज वह भी हो चुकी।
हाय मैं हाथोंसे अपने प्राणपतिको खो चुकी॥
अब मुझे संसारकी शोभा निरखना है वृथा।
प्राणके स्वामी नहीं, तो प्राण रखना है वृथा॥

[बेहोश होकर गिरना, सखियोंका संभालना]

पद्मा०—आचार्य्य! यदि कुमार कारागारसे मुक्त न होंगे, तो महा अनर्थ हो जायगा।

आचार्य्य—पद्मावती! मैं अभी गोविन्दराव ज्योतिषीको लेकर दिल्ली जाता हूं और कुमारका पता लगाता हूं, परमात्माने चाहा तो बहुत शीघ्र कुमारको लेकर आऊंगा।

पद्मा०—ज्योतिषीजी कहां हैं?

आचार्य्य—द्वारपर खड़े हैं।

पद्मा०—(स्वगत) उनसे बुलाकर कुछ पूछूं।

आचार्य्य—इस समय हमलोगोंको न रोको नहीं तो सब परिश्रम व्यर्थ हो जायगा।



पद्मा०—अच्छा तो आप पधारिये ।

आचार्य्य—हां मैं जाता हूं ।

सब—आचार्य्य को प्रणाम ।

आचार्य्य—आशीर्वाद । (प्रस्थान)

प्रभात—(होशमें आकर स्वगत) प्राणेश्वर ! क्या अब मुझसे न मिलोगे ? क्या त्याग दिया ? सर्वदाके लिये त्याग दिया ? अच्छा जैसी तुम्हारी इच्छा । परन्तु याद रक्खो, तुम त्याग दो मगर मैं तुम्हें नहीं त्याग सकती ।

ये अबला प्रेमके बन्धनमें तुमको स्वयं जकड़ेगी ।
ये दासी स्वर्गमें आकर तुम्हारा हाथ पकड़ेगी ॥

पद्मा०—स्वर्गमें नहीं, तुम संसारमें ही उनका हाथ पकड़ोगी ।

प्रभात—पद्मावती ! क्या अब भी उनके आनेकी आशा है ?

पद्मा०—है और अवश्य है । चाँदनीको चन्द्रकी आशा न रहे, नदियोंको समुद्रकी आशा न रहे, पृथ्वीको सृष्टि-समूहकी आशा न रहे, परन्तु प्रभात सुन्दरीको कुमार-की आशा है, और अवश्य है ।

प्रभात—किसके आधार पर ?

पद्मा०—मेरे आधारपर ।

प्रभात—प्यारी सखी ! क्या तेरे आधार पर ? क्या तू कुमार को ला सकती है ?

पद्मा०—अवश्य ला सकती हूं, जब मैंने तुम्हारे विवाहका प्रण किया है, तो कुमारको भी लानेमें मैं समर्थ हूं ।



प्रभात—क्या तुझे अपने कार्य्य पर विश्वास है ?

पद्मा०—हां, हां, मुझे पूर्ण विश्वास है, मैं जाती हूं और कुमार को छुड़ाकर लाती हूं ।

हृदयमें शान्तिको धारण करो मैं शीघ्र जाती हूं ।
विधर्मी देशमें अपना महत्कौशल दिखाती हूं ॥
प्रतिज्ञा है मेरी उस वीरको मैं साथ लाऊंगी ।
अगर लाई न उसको तो न अपना मुंह दिखाऊंगी ॥

[पद्माका प्रस्थान प्रभातका गाना]

गायन ।

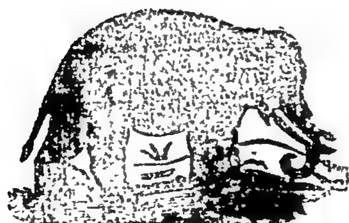
हे बृजके बसैया, कृष्ण कन्हैया,
दुखियोंपर उपकार करो ।
इस दुख सागरसे मुझ अबलाकी,
नाव नवैया पार करो ॥
यदि तुम नटवर गिरधारी हो,
मनमोहन हो बनवारी हो ।
यदि दीनोके दुखहारी हो,
मेरे दुखका संहार करो ॥



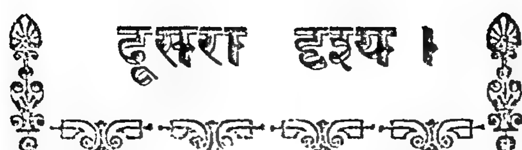
दुष्टोंने देशको आ घेरा,
विकराल समयका है फेरा।
आरत जनकी इस दीन दशापर,
दीनानाथ विचार करो॥
है 'विन्दु' यही विनती मेरी,
हे करुणामय न करो देरी।
आधार हमारे नन्ददुलारे,
भारतका उद्धार करो॥

[प्रभातका सखियों समेत प्रस्थान]

पटाक्षेप]







स्थान—देहलीका मार्ग .

[आचार्य्य और गोविन्दरावका प्रवेश]

आचार्य्य—ज्योतिषीजी !

गोविन्द—श्रीगोवि०.........

आचार्य्य—देहली नगरमें तो आ गये, परन्तु कुमारका अनु-सन्धान कैसे लगायें ?

गोविन्द—महाराज ! किसी पहरेदारसे पता पूछ लीजिये। श्रीगोवि०......

आचार्य्य—वाह, वाह, जान-बूझकर मूर्ख बनते हो ।

गोविन्द—क्यों महाराज ! मूर्ख बननेकी क्या बात है। श्रीगो०

आचार्य्य—अरे भाई ! अगर किसी पहरेदारसे कुमारका पता पूछेंगे तो वह हमको सीधे स्वर्ग पहुंचायेगा या नहीं ?

गोविन्द—ओ, हो, हो, यह तो ठीक है। श्रीगोवि०......

आचार्य्य—मैं तो एक विचार करता हूं।

गोविन्द—भला वह क्या ? श्रीगोवि०......

आचार्य्य—वह यही है कि तुम अपनी ज्योतिष गणना द्वारा कुमारका पता लगाओ।



गोविन्द—(स्वगत) लीजिये,बिल्लीकी दौड़ चूहे तक। श्रीगोवि०...

आचार्य्य—क्यों? क्या सोचते हो?

गोविन्द—जी! मैं यही सोचता हूं, कि ज्योतिषसे कुमारका पूरा पता तो लगेगा। नहीं, केवल दिशा और स्थान-का ज्ञान हो जायगा। फिर भला इतने पतेसे हम-को क्या लाभ होगा? श्रीगोवि०......

आचार्य्य—अरे भाई! इतने पतेसे तो आकाश पाताल एक हो सकता है। तुम पुस्तक निकालकर देखो तो सही।

गोविन्द—हाय, हाय, यह पागल बूढ़ा तो मेरे पीछे ही पड़ गया। खैर जी! अब तो पुस्तक खोलनी ही पड़ेगी और कुछ न कुछ झूठ सच बोलना ही पड़ेगा। श्रीगोवि०......

आचार्य्य—ज्योतिषीजी! अब विलम्ब करनेका समय नहीं है, शीघ्र गणितका हिसाब लगाओ, और कुमारका पता बताओ।

गोविन्द—बहुत अच्छा महाराज! पुस्तक खोलता हूं। श्रीगो०...

[पुस्तकका खोलना]

रवि बुध भौमः सन्मुखे सर्व कालं।
शनि धन हर्ता प्रष्ट स्वामी करालं॥
यमुन नदी नाम् सर्वदा स्वच्छ धारः।
सशुभस्थाने वसति क्षत्रीकुमारः श्रीगोवि०



आचार्य्य—वाह, वाह, ज्योतिषीजी! तुमने तो बहुत अच्छा श्लोक निकाला।

गोविन्द—जी हां महाराज! यह है सारे ज्योतिषका गर्म मसाला। (स्वगत) अरे श्लोक कैसा यहां तो जो मनमें आया, गढ़ डाला। श्रीगोवि०······

आचार्य्य—परन्तु इसमें अशुद्धियाँ अनेक रह गयी हैं।

गोविन्द—अररर इतना अच्छा श्लोक बनाकर दिया तो भी इस बुड्ढेने अशुद्धी निकाल ही दी, इसी लिये तो हमने अपने काव्यकी समालोचना करानी ही बन्द कर दी है।

आचार्य्य—हां तो ज्योतिषीजी! एक बार पुनः अपना श्लोक पढ़िये तो उसीके अनुसार हमलोग प्रस्थान करें।

गोविन्द—(स्वगत) उंहूं, एकबार श्लोक पढ़ा तो श्लोक अशुद्ध बता दिया, अबकी श्लोक पढ़ूंगा तो ज्योतिष शास्त्र ही झूठा कर देगा। श्रीगोवि०······

आचार्य्य—क्यों भाई! मौन क्यों साध गये?

गोविन्द—महाराज! श्लोक पढ़नेकी क्या आवश्यकता है, मैं भाषामें ही उसका सारांश पुनः कहे [illegible]ता हूं।

आचार्य्य—नहीं, नहीं, श्लोक तो तुम्हें कहना ही पड़ेगा साथ ही साथ श्लोकका भावार्थ भी करना पड़ेगा।

गोविन्द—धत्तेरेकी इस बूढ़े बन-बिलावने मेरी नाक ही छेद दी।



आचार्य्य—बोलो, बोलो, शीघ्र बोलो।

गोविन्द—बोलता हूं महाराज! अभी बोलता हूं, श्रीगोवि०...
सुनिये महाराज।

आचार्य्य—कहो।

गोविन्द—रवि बुध भौमः सन्मुखे सर्व्व कालं। अर्थात् सूर्य्य, चन्द्रमा, और बुध, ये तीनों, महाराज सब समय सन्मुख रहें। श्रीगोवि०......

आचार्य्य—धन्य है, धन्य है।

गोविन्द—और सुनिये महाराज।

आचार्य्य—कहो, कहो।

गोविन्द—शनि धन हर्ता पृष्ठ स्वामी करालं। अर्थात् धनके हरण करने हारे कराल रूप जो शनिश्चरदेवजी हैं, सो महाराज पृष्ट स्वामी कहते पीठपर सवार रहैं। श्रीगोवि०......

आचार्य्य—सत्यमेव, सत्यमेव।

गोविन्द—और सुनिये महाराज।

आचार्य्य—हां और क्या है भाई?

गोविन्द—यमुन नदीनां सर्व्वदा स्वच्छ धारः। अर्थात् सर्व्वदा स्वच्छ धारा है, जिसकी ऐसी जो जमुना नदी है। श्रीगोवि०......

सशुभस्थाने वसति क्षत्रीकुमारः। अर्थात् उसी शुभ स्थानमें श्रीराजकुमार निवास करते हैं। श्रीगोवि०...



आचार्य्य—तो ज्योतिषीजी ! क्या कुमारका कारागार जमुना जीके भीतर है ?

गोविन्द—जी नहीं महाराज ! कारागार तो बाहर यमुना-तट पर है। श्रीगोवि०......

आचार्य्य—तो आपके श्लोकमें यमुना नदी है, तट तो आया ही नहीं ।

गोविन्द—अररर महाराज ! काव्य करनेमें जरा भूल हो गई। श्रीगोवि०........

आचार्य्य—धन्य हो, कवीश्वरजी ! आप ही जैसे कवियोंने तो काव्य महोदधिको अवतक स्थायी रक्खा है।

गोविन्द—और क्या महाराज ! यदि हमलोग न होते तो यह काव्य महोदधि केवल प्रयागराजका गन्दा नाला हो रह जाता। श्रीगोवि०......

आचार्य्य—अच्छा तो अब यहांसे चलकर कुमारके कारागारका पता लगाना चाहिये।

गोविन्द—हां, हां, अब तो बहुत शीघ्र पता लग जायगा। श्रीगो०

आचार्य्य—परन्तु एक बात और भी है।

गोविन्द—वह क्या ?

आचार्य्य—यहांसे आगे बढ़नेके लिये अपना भेप बदलना होगा नहीं तो शत्रु पहचान लेंगे।

गोविन्द—लो भाई ! इस साट वर्षके बूढ़ेको भी जासूसी करने-का शौक लगा है। श्रीगोवि०...



आचार्य्य—अच्छा आओ हमलोग इस झाड़में छिपकर अपना भेष बदलें।

गोविन्द—हां, हां, बदल लीजिये अभी तो शुभ मुहूर्त है। पीछे भरणी भद्रा लग जायगी।

आचार्य्य—आओ, मेरे साथ आओ।

गोविन्द—चलिये बूढ़े बाबा चलिये श्रीगोवि०··· (प्रस्थान)

[पद्माका मर्दाने वेषमें प्रवेश]

पद्मा०—बहुत प्रयत्न किया कि आचार्य और ज्योतिषीजीसे रास्तेमें मुलाकात हो जाय, परन्तु ऐसा न हुआ, अस्तु अब क्या करना चाहिये? पहले तो इतने बड़े नगरमें आचार्य्यका मिलना ही मुश्किल है, फिर यदि मिल भी गये तो कुमारका मिलना असम्भव है। हे परमात्मा! चारों ओर आपत्ति ही आपत्ति दिखलायी पड़ती है।

[नेपथ्यमें आचार्य्य और गोविन्द]

गोविन्द—बूढ़े बाबा! यह टोपी तो मैं नहीं पहनूंगा।

आचार्य्य—अरे भाई! टोपी नहीं पहनोगे तो सब मामिला अधूरा ही रह जायगा।

गोविन्द—अरे हाय, हाय, क्या मैं ज्योतिषी ब्राह्मण होकर तुर्की टोपी पहनूंगा? श्रीगोवि०······

आचार्य्य—अरे भाई! हल्ला मत मचाओ, नहीं तो शत्रु देख लेंगे, और बुरा हो जायगा।



पद्मा०—हैं, ज्योतिषी ब्राह्मण ! और तुर्की टोपी ? हां हां, ठीक है। शायद आचार्य्य और ज्योतिषीजी भेष बदलकर कुमारका अनुसन्धान करनेके लिये जा रहे हैं, धन्य है परमात्मा ! अब मुझे भरोसा हो गया, कि कुमार अवश्य छूटेंगे।

[आचार्य्य और ज्योतिषीका प्रवेश]

आचार्य्य—या करीम या रहीम। या करीम या रहीम।

पद्मा०—आचार्य्यको प्रणाम।

आचार्य्य—अरे भाई तुम कौन हो, जो मेरा मज़ाक उड़ाते हो। एक मुसलमान फकीरको आचारज काहके पुकारते हो।

गोविन्द—धत्तेरे की, सर मुड़ाते ही ओले पड़े। श्रीगोवि०......

पद्मा०—आचार्य्य ! आप अपनेको न छिपाइये, यह दासी आपको बहुत देरसे ढूंढ़ती है। मैं कोई शत्रु-पक्षीय नहीं बल्कि आपकी पूर्ण परिचिता पद्मावती हूं।

आचार्य्य—क्या पद्मावती ?

गोविन्द—धत्तेरे की ! खोदा पहाड़ तो निकली छछूंदर। श्रीगोवि०......

पद्मा०—आचार्य्य ! मुझे कुमारीने आप हीके पास कुमारको छुड़ानेके लिये भेजा है।

आचार्य्य—चलो बहुत अच्छा हुआ, ऐसे समयमें तुम्हारी बहुत आवश्यकता थी।



गोविन्द—आचार्य्य ! यह तुर्की टोपी इसको देदो, और इसका साफा मुझे देदो।

आचार्य्य—ज्योतिषीजी ! कामकी बातें करो।

गोविन्द—श्रीगोवि०......

आचार्य्य—पद्मावती ! अब तुम बताओ कि कुमारको कैसे छुड़ाया जाय ?

पद्मा०—मैंने तो एक उपाय सोचा है।

आचार्य्य—वह क्या ?

पद्मा०—मैं बनूंगी वेश्या।

आचार्य्य—अच्छा।

पद्मा०—और आप बनेंगे सारँगिया।

आचार्य्य—अच्छा।

पद्मा०—और ज्योतिषीजी बनेंगे मँजीरची।

गोविन्द—छी, छी, छी ! क्या मैं, और मँजीरची ! रंडीका भड़ुवा बनूंगा श्रीगोविन्दाय........०

आचार्य्य—खैर इसके बाद ?

पद्मा०—मैं औरङ्गजेबके दर्बारमें गाने जाऊंगी और वहीं कुमारको बुलाऊंगी फिर जो कुछ करना होगा वह वहीं बताऊंगी।

गोविन्द—अररर यह औरत क्या है पूरी कामरूप कमच्छाकी जादूगरनी है। श्रीगोविन्दाय०........



आचार्य्य—परन्तु यह बात कुमारको भी तो सूचित करनी चाहिये।

पद्मा०—यह काम आप कीजिये।

आचार्य्य—अच्छा यह काम मैं करके आता हूं।

पद्मा०—शीघ्र जाइये क्योंकि आज ही औरङ्गजेबके यहां एक जलसा होगा, उसीमें सब काम करना होगा।

गोविन्द—(स्वगत) बेटा गोविन्द! तुम्हें तो आज बेमौत मरना होगा। श्रीगोविन्दाय०.........

आचार्य्य—मैं अभी आता हूं, तुम यहाँ ठहरो।

पद्मा०—अच्छा तो मैं यहाँ की सरायमें ठहरती हूं।

आचार्य्य—हां, हां, शीघ्र जाओ।

पद्मा०—जो आज्ञा।

(प्रस्थान)

आचार्य्य—ज्योतिषीजी! आप पद्मावतीके साथ जाइये, मैं अकेलाही कुमारके पास जाऊंगा।

गोविन्द०—तो महाराज! आप पधारिये न। मैं पद्मावतीके पास चला जाऊंगा। श्रीगोविन्दाय०......

आचार्य्य—अच्छा मैं जाता हूं। (प्रस्थान)

गोविन्द—हायरे भगवान! इस ज्योतिषी पण्डितको न तूने हिन्दू रक्खा न मुसलमान। जिन म्लेच्छोंकी छाया पड़नेसे हिन्दुओंका शरीर अशुद्ध हो जाता है, आज

उन्हीं मुसलमानोंका भेष बनाकर कुमारका पता लगाने जाता हूं।

तूर्की टोपी पहनकर, करने चला हूं काम।
दुविधामें दोनों गये न माया मिली न राम॥

परन्तु यदि इतना करनेपर भी कुमार छूट जायं तो प्रभातके साथ उनका विवाह करके राज-पुरोहित अवश्य बन जाऊंगा।

हो विवाह कुमारका तो मैं बजाऊं डिम डिमः?
पुरोहिती मिल जायगी। श्रीगोविन्दाय०........

(प्रस्थान)





तीसरा दृश्य

(स्थान—औरङ्गजेबका दर्बार)

औरङ्ग०—ऐ मेरे नेक दर्बारियो ! क्या तुम्हें मालूम है कि आजके रोज यह जलसा किस लिये मनाया गया है ?

१ दर्बारी—जी हां ! अच्छी तरह मालूम है ।

औरङ्ग०—भला किस लिये ?

२ रा दर्बारी—यह जलसा मनाया गया है, दक्खिनकी फतह-यावीके लिये ।

३ रा दर्बारी—हुजूरकी कामयावीके लिये ।

४ था दर्बारी—जश्नोंवहारके लिये ।

औरङ्ग०—हां, हां, वेशक ! यह इसीलिये मनाया गया है, कि हमारे दुश्मन इस जलसेकी :रौनक देखकर पस्त हो जांय, और हमलोग इस शीशेकी सुर्खपरीको होठोंसे लगाकर मस्त हो जांय ।

अगर खुशबू उड़े इसकी तो यह महफिल महक जाये ।
पियो इस तौरसे प्याले पिलानेवाला थक जाये ॥
हमारी बज़्ममें कुछ और ही हसरत समा जाये ।
ज़मींसे आसमां तक बोतलोंका रंग छा जाये ॥

वज़ीर—सुभानअल्लाह ! बन्दानवाजकी आवाज़ क्या है,

गोया खुदाई हुक्मनामेंका पहला वसूल है,जो शख्श इस
रायमें शरीक न हो वह काफिर है, नामाकूल है।
हमारे जिस्मका आराम इस शीशेकी बोतलमें।
हमारी जिन्दगीका नाम है शीशेकी बोतलमें॥
इसी बोतलसे आबे हयातको प्यालेमें ढालेंगे।
इसी बोतलसे अपने दिलके हम अरमां निकालेंगे॥

सब—आमीन ! आमीन !!

द्वारपाल—शाहंशाह ! जहांपनाहके कदमोंमें कुछ अर्ज है।

औरङ्ग०—बोलो, बोलो क्या है ?

द्वारपाल—हुजूर ! शहर लखनऊकी एक रंडी आई है, और वह जल्सेमें अपना हुनर दिखलाना चाहती है।

औरङ्ग०—उसका नाम क्या है।

द्वारपाल—हुजूर वह अपना नाम मिस लैला बताती है।

शाइस्ता०—क्या लैला ? अरे वह मजनूवाली लैला या किसी कूड़ेखानेकी थैला।

औरङ्ग०—बुलाओ बुलाओ उसे अन्दर बुलाओ।

द्वारपाल—जो इर्शाद। (प्रस्थान)

वजीर—हुजूर ! नाम तो बहुत अच्छा है, मिस लैला।

औरङ्ग०—मगर तारीफ तो जब है, कि काम भी आला हो।

शाइस्ता—जहांपनाह ! काम क्यों न आला होगा,लखनऊकी रहनेवाली है,एक एक तानमें दो दो सुर निकालती होगी।

औरङ्ग०—खैर आने भी तो दो।



[पद्मा० वेश्याके रूपमें और आ० ज्यो०का सरंगीयांके रूपमें प्रवेश]

पद्मा०—रौनके अफरोज शाहंशाह आलमको लौंडीका आदाब कुबूल हो।

वजीर०—आइये,आइये मिस लैला जान,देखें तो तुम्हारी तान।

गोविन्द—(श्रीगोविन्दाय नमो नमः)अमाँ उस्ताद देखते क्या हो जमीन या आसमान ? जरा खींचो सारंगीका कान।

आचार्य्य—अबे! तू अपना मंजीरा तो ठीककर।

गोविन्द—अमाँ उस्ताद! मजीरेमें क्या सुर मिलाना है। मजीरेका सुर तो सच्चा गाना है, जहां किसीने तान लगाई, आयं, आयं, आयं, तो मजीरा चट बोला किट किट तायं,किट किट तायं,किट किट तायं।

सब—अबे वाह मजीरेवाले! तूं तो बड़ा उस्ताद मालूम होता है।

गोविन्द—अजी हजरत! उस्ताद हमारे बावाजान, उस्ताद हमारी अम्मीजान, उस्ताद हमारी खालाजान, मगर इन तीनोंमें एक मैं ही रह गया नादान वरना आज लैलाजानको बोलने देता ? अजी! तोबह तोबह करो। एक ही सुरमें इस मैफिलको आसमानमें उड़ा देता।

सब—मरहवा! मरहवा!! सुभान अल्लाह, सुभान अल्लाह, अच्छा मिस लैलाजान! अब जल्दी कोई चीज शुरू करो



जिससे हमलोगोंका सरूर भी न जाने पायें और तुम्हारी एक ही चीजमें गानेका मजा आ जाये।

पन्ना०—सरकार! गानेके लिये तो मैं तैयार हूं, मगर एक बातसे लाचार हूं।

औरङ्ग०—वह क्या है, लैला?

पन्ना०—सरकार! रास्तेमें मेरा तबलची मर गया।

सब—तोबह! तोबह!!

औरङ्ग०—कैसे मर गया?

गोविन्द—जनाब! उसको हैजा हो गया था श्रीगोवि०......

औरङ्ग०—चुप रहो! आजके दिन मुर्दोंका नाम न लो। लैला! आखिर तुम्हें क्या चाहिये?

पन्ना०—हुजूर! मुझे एक दर्बारका तबलची चाहिये।

औरङ्ग०—अच्छा शाइस्ताखां! लैलाको दर्बारका एक तबलची दो।

शाइस्ता—जो हुक्म! वजीर साहब! आप भी तो ठेका लगाते हैं, जरा बजाइये न। ता धिन्ना, ता धिन्ना।

वजीर—अजी वाह! क्या मेरा मज़ाक उड़ाते हो?

शाइस्ता—वज़ीर साहब! मजाक उड़ानेकी क्या बात है, आखिर उस दिन आपने बम्बईवाली धन्नूके साथ बजाया ही था।

वजीर—अजी वह बात आपसकी थी।



गोविन्द—धत्तेरेकी ! आजकलके वजीर भी आपसमें ठेकेवाजी करते हैं । श्रीगोवि०........

औरङ्ग०—शाइस्ताखां ! अपने यहांका मुहम्मदगुल भी तो तवला वजाता है, फिर उसे क्यों न बुलाया जाय ।

वजीर०—हां, हां, वो तो इम्पायर थियेटरका डाइरेक्टर है; उसे जरूर लैलाके साथ बैठालो ।

शाइस्ता—अजी मुहम्मदगुल !

मुहम्मद—जी हुजूर ।

शाइस्ता—अरे उस्ताद ! जरा तुम्हीं अपना पुराना कारबार संभालो और लैलाके साथ धीमें तितालेका हाथ निकालो ।

मुहम्मद—हुजूर ! मैं जानता तो कुछ नहीं, मगर फिर भी आपकी ज़बान नहीं टाल सकता ।

औरङ्ग०—नहीं जी नहीं, तुम वड़े हुनरदार आदमी हो । हां मिस लैलाबाई ! मुहम्मदगुल ठेका लगाता है, और आप शुरू कीजिये ।

पन्ना०—बहुत खूब ।

गायन ।

पन्ना०—

बुतोंको देखकर इस दिलको संभालें क्योंकर ।
ज़बान बंद है फिर आह निकालें क्योंकर ॥



जिससे हमलोगोंका सरूर भी न जाने पायें और तुम्हारी एक ही चीजमें गानेका मजा आ जाये।

पन्ना०—सरकार! गानेके लिये तो मैं तैयार हूं, मगर एक वातसे लाचार हूं।

औरङ्ग०—वह क्या है, लैला?

पन्ना०—सरकार! रास्तेमें मेरा तवलची मर गया।

सव—तोवह! तोवह!!

औरङ्ग०—कैसे मर गया?

गोविन्द—जनाव! उसको हैजा हो गया था श्रीगोवि०......

औरङ्ग०—चुप रहो! आजके दिन मुर्दोंका नाम न लो। लैला! आखिर तुम्हें क्या चाहिये?

पन्ना०—हुजूर! मुझे एक दर्वारका तवलची चाहिये।

औरङ्ग०—अच्छा शाइस्ताखां! लैलाको दर्वारका एक तव-लची दो।

शाइस्ता—जो हुक्म! वजीर साहव! आप भी तो ठेका लगाते हैं, जरा वजाइये न। ता धिन्ना, ता धिन्ना।

वजीर—अजी वाह! क्या मेरा मज़ाक उड़ाते हो?

शाइस्ता—वज़ीर साहव! मजाक उड़ानेकी क्या वात है, आखिर उस दिन आपने वम्वईवाली धन्नू के साथ वजाया ही था।

वजीर—अजी वह वात आपसकी थी।



गोविन्द—धत्तेरेकी ! आजकलके वज़ीर भी आपसमें ठेकेबाजी करते हैं। श्रीगोवि०........

औरङ्ग०—शाइस्ताखां ! अपने यहांका मुहम्मदगुल भी तो तवला बजाता है, फिर उसे क्यों न बुलाया जाय।

वजीर०—हां, हां, वो तो इम्पायर थियेटरका डाइरेक्टर है; उसे जरूर लैलाके साथ बैठालो।

शाइस्ता—अजी मुहम्मदगुल !

मुहम्मद—जी हुज़ूर।

शाइस्ता—अरे उस्ताद ! जरा तुम्हीं अपना पुराना कारबार संभालो और लैलाके साथ धीमें तितालेका हाथ निकालो।

मुहम्मद—हुज़ूर ! मैं जानता तो कुछ नहीं, मगर फिर भी आपकी ज़बान नहीं टाल सकता।

औरङ्ग०—नहीं जी नहीं, तुम बड़े हुनरदार आदमी हो। हां मिस लैलाबाई ! मुहम्मदगुल ठेका लगाता है, और आप शुरू कीजिये।

पद्मा०—बहुत खूब।

गायन।

पद्मा०—

बुतोंको देखकर इस दिलको संभालें क्योंकर।
ज़बान बंद है फिर आह निकालें क्योंकर॥



दोहा ।

प्रेमप्याला जहर है छुअत नशा चढ़ जाय ।
जो इस प्यालेको पिये सो आखिरमें पछताय ॥
नजरकी बरछियां करती हैं जिगरके टुकड़े ।
हाय इस जखमको सीनेमें छिपालें क्योंकर ॥

दोहा ।

जबसे उस बेदर्दने मारा चितवन तीर ।
"बिन्दु" हमारे नयनसे बरसत निशि दिन नीर ॥
देखके आंसुओंकी धारको मेरा दिलवर ।
पूछता है तेरे फूटे हैं ये छाले क्योंकर ?

सब—वाह, वाह, कमाल है, कमाल है ।

गोविन्द—अरे वाह, वाह, मैंने भी क्या मंजीरा बजाया, कि किसीके समझमें नहीं आया । इसीलिये तो उस्ताद लोग कहते हैं, कि गाने बजानेका समझना बहुत मुश्किल है ।

कण्ठमें सुर राग, सारङ्गीमें, तबलेमें समः ।
टुनुन टुन मजीरा कहै, श्रीगोविन्दाय०……



औरङ्ग०—वाकई मिस लैलाने कमाल कर दिया, आखिर लखनऊकी है न। सुरीले गलेमें खनखनाती हुई आवाज निकालना लखनऊ वालों ही का काम है।

पद्मा०—आलीजा! आप जो कुछ तारीफ करते हैं, वह सिर्फ मेरा दिल बढ़ानेके लिये, लेकिन मैं समझती हूं, कि अभी मेरा गाना काबिले तारीफ नहीं हुआ।

औरङ्ग०—मैं नहीं समझता कि इससे अच्छा गाना और क्या होगा।

पद्मा०—हुजूर! गाना तो इससे भी बढ़कर हो अगर साथमें तबलेका काफी हुनर हो।

औरङ्ग०—मिस लेला! अब इससे बढ़कर तबलची और कहां से मंगाया जाय।

पद्मा०—हुजूर! तबलची तो आपके कैदखानेमें कैद है अगर आपकी मर्जी हो तो बुलाया जाय।

औरङ्ग०—हैं, मेरे कैदखानेका कैदी और तबलची!

पद्मा०—जी हां, कैदी।

औरङ्ग०—ऐसा कौन होशियार है?

पद्मा०—शाहंशाह आलम! उस तबलचीका नाम जगदीश कुमार है।

औरङ्ग०—हैं जगदीशकुमार! और तबला बजाने वाला!

पद्मा०—जी हाँ, बजाने वाला!

औरङ्ग०—भला तुमने उसका हुनर कैसे जाना?



पद्मा०—हुजूर! एक मर्तबा शिवाजीके दर्बारमें मेरा हुआ था गाना, और वहीं उस तबलचीका हुनर मैंने जाना।

औरङ्ग०—मगर उसको तो कल फांसी होगी।

पद्मा०—भला किस जुर्ममें?

औरङ्ग०—उसने इस्लाम कबूल नहीं किया, इसी जुर्ममें।

पद्मा०—खैर अगर ऐसा है, तो मैं उसे मुसलमान बनाती हूं।

औरङ्ग०—क्या तुम, और उसे मुसलमान बनाओगी?

पद्मा०—हां, हां, मैं बनाऊंगी, आप उसे यहां बुलाइये, वह मेरे साथ ठेका लगाये, जरा रङ्गतमें आ जाय फिर देखिये वह कैसा दमभरमें मुसलमान हो जाता है।

गोविन्द—(ज्योतिषीसे पोशीदा) अरे उस्ताद, मेरा तो इस नकली दाढ़ीमें दम निकलता है।

आचार्य—ज्योतिषीजी,ठहर जाओ,अब मामिला फतह होता है।

गोविन्द—ऐसी बात है। श्रीगोवि०...

औरङ्ग०—शाइस्ता खां, जाओ उस कैदीको दर्बारमें ले आओ।

शाइस्ता०—जो इर्शाद। (प्रस्थान)

औरङ्ग०—मिस लैला! मैं नहीं समझता कि तुम उस जिद्दी इन्सानको किस तरह मुसलमान बनाओगी!

पद्मा०—आली जा! वह मेरे हुस्नपर फरेफ्ता है, उसे मेरे इश्कका सौदा है, अगर मैं उसे जोर दूंगी तो मुझे यकीन है, कि वह जरूर काफिरोंका मजहब छोड़कर मजहबे इसलाम कबूल करलेगा।



औरङ्ग०—इंशा अल्लाह! अगर ऐसा है, तो मेरी सारी उम्मीदें बर आयेंगी।

पन्ना०—आली जा! अगर मैं कुमारको मुसलमान न बना सकी तो आजसे अपना पेशा छोड़ दूंगी।

औरङ्ग०—शावाश लैला! शावाश! अगर आज तुमने यह काम पूरा कर दिया तो मैं तुम्हें वहुत खूब इनाम दूंगा।

पन्ना०—इंशा अल्लाह! यह काम मैं बहुत खूबसूरतीसे बजा लाऊंगी।

[कुमारका प्रवेश]

औरङ्ग०—लो मिस लैलाजान! यह कैदी आ गया।

पन्ना०—कौन? कुमार साहब।

कुमार—प्यारी लैला! तुम यहां कहां?

पन्ना०—जहां आप वहां मैं! आइये आइये, जरा मेरे साथ ठेका लगाइये।

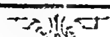
कुमार—लैला! मैं तो कल फांसी चढ़ रहा हूं, अब क्या ठेका लगाऊं?

पन्ना०—कुमार साहब! मैं आपको हुजूरसे कहकर छुड़ा दूंगी, मगर इस वक्त तो हुजूरको खुश करिये।

कुमार—खैर! जैसी तुम्हारी मर्जी! आखिर कल तो फांसी चढ़ना ही है, आज तो तबला बजालूं।

पन्ना०—क्यों नहीं आखिर आप मुझसे मुहब्बत करते हैं, न!

औरङ्ग०—क्योंजी कुमार! जब तुम इस मुसलमान रंडीसे



प्यार करते हो तो हिन्दूपनेका दावा क्यों रखते हो? क्या इसके साथ मुहब्बत करनेमें तुम्हारा धर्म कायम रहता है?

कुमार—हुजूर! मैं तो इस्लामसे नरफरत नहीं करता बल्कि उसे अच्छी निगाहोंसे देखता हूं।

औरंग०—हैं, अच्छी निगाहोंसे, देखते हो। अच्छा तो बताओ कि उस दिन मुसलमान होनेसे क्यों इनकार करते थे?

कुमार—उस दिन एक मजहबी जोश था।

औरङ्ग०—मगर आज।

कुमार—आज इस औरतने उस जोशको ठंढा कर दिया।

औरङ्ग०—तो क्या तुम इस्लाममें आनेको तय्यार हो?

कुमार—हां, हां, तैय्यार हूं।

गोविन्द—अरे भाई! क्यों रंडीके पीछे ईमान खोता है?

आचार्य्य—चुप।

गोविन्द—श्रीगोविन्दाय नमो नमः।

औरङ्ग०—शाबाश मेरे सच्चे बहादुर! आज मैं तुमसे खुश हुआ। शाइस्ताखां! इसकी हथकड़ी बेड़ी खोल दो।

शाइस्ता—जो हुक्म! (हथकड़ी बेड़ी खोलता है।)

पन्ना०—कुमार साहब! अब तो तबला लीजिये।

कुमार—बहुत खूब! बीबी साहबा।

गोविन्द—धन्नेरेकी! तलवार चलाते चलाते पूरा तबलची बन गया।



आचार्य्य—चुप।

गोविन्द—श्रीगोविन्दाय०......

कुआर—(तबला लेकर)

व्यर्थ आशाओंने रक्खा है, अभी जिन्दा मुझे।
भाग्य-चक्करने बनाया, आज साजिन्दा मुझे॥

पद्मा०—हुजूर! आज मैं आपको बेमिस्ल हुनर दिखाना चाहती हूं।

औरङ्ग०—यानी।

पद्मा०—यानी आप अपने यहांकी सब बत्तियां गुलकर दें, मैं दीपक राग गाऊंगी और सारी बत्तियां आपसे आप रौशन हो जायेंगी।

औरङ्ग०—वाह, वाह, क्या बे मिसाल हुनर है, अच्छा शाइस्ता-खां! रोशनी बुझवा दो।

शाइस्ता—जो हुक्म।

गोविन्द—देखा भाई! अब शिकार फंसा।

राग दीपक गान से, बत्ती जले फिर टिम टिमः।
गाऊं लेकर मैं मजीरा। श्रीगोविन्दाय०........

गायन।

पद्मा०—

दीपक ज्योति मलीन भई अब कैसे कहो
चिराग जले।



है धर्म समुद्रकी धार यही सागरमें कैसे
आग जले ॥

[बत्तियां बुझ जाती हैं]

आचार्य्य—है ये सुन्दर प्रस्थान समय हो जाय
बैरियोंको विस्मय ।

गोविन्द—हे देवीजी न विलम्ब करो आओ
जल्दीसे भाग चलें ॥ श्रीगोविन्दाय०

(कु० गो० पद्मा० आ० का धीरे धीरे प्रस्थान, गाना बन्द होता है।)

औरङ्ग०—हैं ! हे !! लैला ! गाना क्यों बन्द हो गया ?

शाइस्ता०—हुजूर ! लैला नहीं है ।

औरङ्ग०—क्यों नहीं है ? जल्द रोशनी जलाओ । कम्बख्तो देखो लैला कहां गई ? कुमार कहां गया ? जल्दी पता लगाओ । अरे दौड़ो, दौड़ो जल्दी दौड़ो । हाय, हाय, धोखा ! धोखा !! खौफनाक धोखा !!!
अरे जलाओ, जलाओ, कम्बख्त रोशनी जल्दी जलाओ ।

[रोशनी होते ही सब ढूंढ़ने जाते हैं ।]

[सबका प्रस्थान ।]

औरङ्ग०—हां, हां, समझा ! यह कोई हिन्दू औरत थी, जो मुझे दगा दे गई। कुमारको मेरे पंजेसे ! छुड़ा लेगई। ओफ ! हिन्दू औरतोंमें यह करामत ! वाहरे हिन्दू और वाहरी औरत जात !

औरतें भी इस कदर, रखती हैं अपना हौसिला ।
औरतें खूँख्वार हैं, तूफान हैं, गैबी वला ॥
अक्ल धोखेमें गंवाई, आज औरङ्गजेबने ।
औरतोंसे हार खाई आज औरङ्गजेबने ॥

[पटाक्षेप]







चतुर्थ दृश्य .





स्थान—मार्ग .

[आचार्य्य, कुमार और ज्योतिषीका प्रवेश]

कुमार—आचार्य्य ! शत्रु-सेना हमारा पीछा बड़े जोरोंसे कर रही है।

आचार्य्य—इसमें कोई संदेह नहीं कि वह बहुत पास आ पहुंची है।

कुमार—तो फिर क्या करना होगा ?

आचार्य्य—करना यही होगा कि अपने प्राणोंका मोह त्यागकर शत्रुओंसे लड़ना होगा।

कुमार—लेकिन इतनी सेनापर तीन मनुष्योंका विजय पाना असंभव है।

आचार्य्य—कुमार ! वीरोंका शरीर केवल इसी दिनके लिये होता है।

गोविन्द—हाय, हाय, मेरे पेटमें तो दर्द होता है। श्रीगो०... ...

कुमार—तो क्या इस समय तलवार संभालना ही अच्छा होगा ?

आचार्य्य—बेशक ! पराधीन होकर शूलीपर चढ़ जानेसे लड़कर प्राण देना ही अच्छा होगा।

[पद्माका प्रवेश]

पद्मा०—आचार्य्य ! औरङ्गजेबका प्रधान सेनापति शमशीर खां इधर ही आ रहा है।

गोविन्द—हाय, हाय, मेरा मजीरा तो भयके मारे पिघला जा रहा है।

कुमार—आचार्य्य ! अब सोचना व्यर्थ है। मैं तलवार निकालता हूं, और शत्रु-सेना संभालता हूं।

आचार्य्य—पद्मावती! तुम कहीं आड़में छिप जाओ। ठीक समयपर यदि हो सके तो सहायता करना।

गोविन्द—अरे महात्मा! कहीं इस ज्योतिषीको भी छिपानेका उपाय बताओ। (पद्माका प्रस्थान)

आचार्य्य—आप हमारे साथ आइये और शत्रुपर शस्त्र उठाइये।

गोविन्द—अरे महाराज ! ज्योतिषी ! और शस्त्र। श्रीगोवि०...

[शमशीरखांका प्रवेश]

शमशीर—अःहा ! बिस्मिल्लाह ! अगर मेरी आंखें धोखा नहीं देतीं तो मेरी नजरोंके सामने जगदीशकुमार है।

कुमार—हां, हां, यह वही तुम्हारा सच्चा शत्रु जगदीशकुमार है।

शमशीर०—सुभान खुदाका।

जिस्म जो आज़ाद था ज़ंजीरमें वो कस गया।

खुद पै काफिर आके मेरे चंगुलोंमें फंस गया।

कुमार—ओ मोटे सेनापति ! मेरी मृत्यु इतनी आसान नहीं जितनी तूं समझता है, बादलका टुकड़ा मिलना हीं



छोटा हो मगर गर्मीकी हुमस पाकर करोड़ों बूंद बरसता है।

कसौटी है मेरी तलवार उसमें कस गया है तूं।
फंसा हूं मैं नहीं, चंगुलमें मेरे फंस गया है तूं॥

शमशीर०—जी हाँ जनाब! बहुत ठीक है। जब शिकारी बाज जालमें फंस जाता है, तो वह भी इसी तरह तड़ फड़ाता है, जिस तरह तू तड़फड़ा रहा है। आगके शोलेमें टिड्डियोंकी कतार इसी तरह जलकर खाक हो जाती है, जिस तरह तू अपना जिस्म जलानेके लिये मेरी तरफ अपनी तलवार बढ़ा रहा है।

नहीं ताकत है, जिनमें वो ज़बांसे ही उबलते हैं।
शजर क्या 'बेंत' के भी फूलते हैं और फलते हैं॥
जो शेखी खोर हैं, वो खामखां अक्सर मचलते हैं।
कजा चींटीकी आती है तो उसके पर निकलते हैं॥

आचार्य्य—ओ दुष्ट दानव शमशीर! ये तेरे शब्द नहीं बल्कि जहरीले तीर हैं, जो हमारे हृदयको छलनी बना रहे हैं, याद रख कि ये वो वाक्य हैं, जो हमारे हाथोंको जबरदस्ती तलवारके कब्जे तक पहुंचा रहे हैं।
एक पलमें ही तेरा ये जोश ढाया जायगा।
बात ही बातोंमें तेरा सर उड़ाया जायगा॥

गोविन्द—अब यहां पर बुलबुलोंका दल लड़ाया जायगा।
ज्योतिषीजी का यहां हलुआ बनाया जायगा॥



महाभारतका समर प्रारम्भ होता क्रोध मः ।
भाड़ीमें छिप जाऊं मैं श्रीगोवि० .... ॥

शमशीर०—जगदीशकुमार ! क्या तुम अपनी ज़बानकी तरह तलवार भी चला सकते हो ?

कुमार—तलवारकी करामात देखना है, तो अपनी करमसे तलवार निकालो और ज़बानकी तरह तलवार चलती है या नहीं इसका फैसला कर डालो ।

हमेशा जंगमें ही वीरकी हसरत निकलती है ।
जबांसे सौगुनी बढ़कर मेरी तलवार चलती है ॥

शमशीर—अच्छा, मैं बहुत जल्द तेरी तलवारकी रफ्तार देखना चाहता हूं ।

कुमार—जंग शुरू करो ।

शमशीर०—तैय्यार हो ।

[दोनोंका लड़ना, आचार्य्यका यवन-सेनासे पकड़ा जाना, कुमारका घायल होकर गिरना ।]

शमशीर—कहिये जगदीशकुमार साहब ! क्या इसीका नाम बहादुरी है ? क्या आपके तलवारकी सिर्फ यही कारीगरी है ?

कुमार—ओ मतवाले मनुष्य ! सेना और शस्त्रके घेरोंमें ही वीरोंको देखकर अपनी शान बघारता है, मगर याद रख ! शेरका बच्चा घायल होनेपर भी अपनी हिम्मत नहीं हारता है । मगर मैं बहादुर हूं, वीर हूं,

हिन्दूधर्मका सच्चा पक्षपाती हूं, तो प्रतिज्ञाके साथ कहता हूं, कि मरते मरते हजारों विरोधियोंका रक्त बहाऊंगा, सारी दुनियां, सारा संसार मेरी तलवारकी धारसे बच जाय, मगर अपनी वीरताका परिचय देकर तुझे मैं अवश्य यमराजका मेहमान बनाऊंगा।

अगर मरजाऊं मरकर भी चितामें भस्म हो जाऊं।
मगर फिर भी न हिन्दू-धर्मकी कुछ शान खो जाऊं॥
* "भयंकर भूत" बनकर शत्रुके सरपर चढूंगा मैं।
अहिंसा छोड़, प्रतिहिंसाके पथमें ही बढूंगा मैं॥
मेरे विद्रोहकी चिन्ता तुझे मलऊन! चूसेगी।
मेरी मिट्टी पियाला बनकर तेरा खून चूसेगी।

शमशीर०—मैं ऐसा मौका ही न दूंगा, कि तू मेरे ऊपर हाथ उठा सके। तेरी क्या मजाल है, जो मेरी ज़हरीली तलवारसे एक दम भरके लिये भी अपनी गर्दन छुड़ा सके।

मेरी तलवारका सच्चा निशाना बन चुका है तू।
ज़लीलो ख्वार बदतर बे ठिकाना बन चुका है तू॥
इसी तलवारसे मैं तेरी बोटी बोटी छाटूंगा।
जहरकी जड़ जो बढ़ती है उसे पहले ही काटूंगा॥

---

* नोट—भयंकर भूत एक सामाजिक ड्रामा है। जो बहुत परिश्रमके साथ "बजरंग परिषद" के लिये लिखा गया है। और परिषदने इसे सम्मानित भी किया है, मूल्य १।) रु० ॥

आचार्य्य—अच्छा शमशीरखाँ! तुम अगर वहादुर हो तो अपनी तलवार उठाओ और अपनी पूरी शक्तिके साथ जगदीशकुमारका सर उड़ाओ, लेकिन याद रखना कि अगर जगदीशकुमारको मृत्यु न हुई तो तुम्हें अपनी तलवारका कब्जा तोड़ देना पड़ेगा। और आजसे हमलोगोंके साथ जंग करनेका इरादा छोड़ देना पड़ेगा। वोलो मंजूर है?

शमशीर०—हाँ, हां, मंजूर है।

आचार्य्य—अच्छा तो मैं तुम्हें आज्ञा देता हूं, कि तुम तलवार चलाओ।

[शिवाजीका प्रवेश।]

शिवाजी—ठहर जाओ।

शमशीर०—हैं, यह कौन मरहटा?

शिवाजी—मेरा नाम शिवा।

शमशीर०—हैं, क्या शिवा! जेलसे छूट भागा?

शिवाजी—ओ पाजी शैतान! शिवा नहीं छूट भागा, बल्कि हिन्दुस्तानका नसीब जागा।

शमशीर०—तो क्या आप मुझसे जङ्ग करेंगे?

शिवाजी—हां, हम तुम्हारी आत्माको इसी तलवारसे तंग करेंगे।

शमशीर०—(सेनासे) अरे भागो, भागो, जल्दी भागो। ऐ हरूस्तानी शेरों! अपनी जान लेकर भागो।



[सब भागना चाहते हैं, उसी समय पद्माका प्रवेश]

पद्मा०—भागो कहां? इसी रणस्थलमें विलख-विलख कर अपने प्राण त्यागो।

न तुमको हिन्दुओंसे तङ्ग होकर भागना होगा।
तुम्हें इस युद्धमें ही अपना जीवन त्यागना होगा॥

शमशीर०—औरत और लड़ाई।

पद्मा०—औरंगजेबका सेनापति और बेहयाई।

शमशीर०—बहादुरो! अगर शिवाजीसे जान बचाना चाहते हो तो पहले इस औरतको कत्ल कर दो, और भागनेका रास्ता साफ करदो।

पद्मा०—कुछ भी न सहारा है न रस्सी कमन्द है।
भागोगे कहां हर तरफसे मार्ग बन्द है॥

कुमार—क्यों खां साहब! अब कुछ तलवारका हथकण्डा दिखाओ?

शमशीर०—या खुदा, ये इन्सान नहीं, शैतानकी औलाद है।

शिवाजी—(शमशीरखांका हाथ पकड़कर) ओ दुष्ट! ये शैतान की औलाद नहीं बल्कि धर्मका पुतला, सच्चा बहादुर है, आजाद है। आज मैं तेरी उस शत्रुताईका बदला लूंगा,जो कि हिन्दू जातिकी स्मरण-शक्तिमें नहीं बल्कि उंगलियोंमें याद है।

सच्चे बहादुरोंकी है, ये कर्म वीरता।
तेरा कलेजा आज मैं हाथोंसे चीरता॥

अब बोल तेरे जोशका नकशा कहां गया।
तेरी हिफाज़तोंका वो सामां कहां गया॥
ओ दुष्ट! हिन्दुओंका यह धर्मोन्माद है।
सच्चे बहादुरोंका यही "सिंहनाद" है॥

(कलेजा चीरता है, गोविन्दका प्रवेश)

गोविन्द—रक्तकी नदियां वही पूरी हुई घमा घमः।
शत्रुकी चिन्ता मिटी। श्रीगोवि०........

पटाक्षेप।



पांचवां दृश्य।

स्थान—जनकरावका महल.

(जनकका प्रवेश)

जनक०—क्यों री मोहनी! प्रभात और जगदीशकुमारके गुप्त प्रेमका हाल तूने पहले मुझसे क्यों न कहा?

मोहनी महाराज! मैं समझती थी, कि यह प्रेम समस्या शीघ्र ही हल हो जायगी। अन्तमें आपको भी खबर मिल जायगी, परन्तु भाग्यने ऐसा न होने दिया।

जनक—तुमलोगोंने आपसमें ही व्यर्थ आशाओंका पुल बाँधकर सारा प्रयत्न विफलकर दिया।

मोहनी—खैर! अब तो जो कुछ होना था सो हो गया। अब आगे क्या करना चाहिये इसके लिये विचार करना चाहिये।

जनक—इसका विचार यही है कि मैं अपने सेनापतिको दिल्ली भेजता हूं, और औरङ्गजेबसे किसी तरह प्रार्थना करके कुमारको बुलवा लेता हूं।

[गोविन्दरावका प्रवेश]

गोविन्द—श्रीगोविन्दाय०..................

जनक—अहा ज्योतिषीजी! आप आ गये।